वर्ष : 22 अंक : 3 (78वाँ अंक) जुलाई-सितंबर, 2017

विचार

नागरिकों की शिकायतों की सशक्त आवाज़

यूरोपीय संघ

उन्नति
UNNATI

- **संपादकीय** **3**
- शिकायत निवारण प्रक्रियाः अनुभव और सीख **4**
- चंपारण सत्याग्रह पर एक नज़रः असंगठित महिलाओं को संगठित करने में 'स्वाश्रयी महिला संघ - सेवा' की सीख **8**
- साक्ष्यों की प्रासंगिकता को समझनाः चंपारण में नील किसानों की हालत के बारे में गांधीजी के अध्ययन से सीख **17**
- तीन तलाक पर फैसला मुस्लिम महिलाओं की वास्तविक दुर्दशा दूर करने में विफलः इंदिरा जयसिंह **22**
- समुदाय छुए बिना सीवेज सिस्टम (मलजल तंत्र) का प्रबंधन कैसे कर सकता है? **27**
- जल योद्धाः बुंदेलखंड में 'जल सहेली' बनी महिला सशक्तिकरण का उत्कृष्ट उदाहरण **29**

संपादकीय

नागरिकों की शिकायतों की सशक्त आवाज़ेंः युवाओं द्वारा 'सोशल मीडिया' का उपयोग

आमतौर पर जब आम नागरिकों की सच्ची शिकायतों का निवारण नहीं होता है, तब सरकार को जवाबदेह बनाने के लिए जन सुनवाई, प्राधिकारियों के समक्ष जुलूस के रूप में सक्रिय लामबंदी और विरोध प्रदर्शन किया जाता है। यह अधिकारों के दावे के लिए नागरिक भागीदारी की प्रक्रिया है। एक शताब्दी पहले 1917 में, गांधीजी ने नील किसानों की अमानवीय परिस्थितियों का खुलासा करते हुए साक्ष्यों का इस्तेमाल किया था और अंत में चंपारण कृषि अधिनियम लागू हुआ था। हालांकि सभी मुद्दों का निवारण नहीं हो पाया, फिर भी किसानों को काफी राहत मिली थी। साक्ष्य देने की प्रक्रिया में, किसानों में आत्मविश्वास की भावना और आशा का संचार हुआ। गांधीजी का कहना था कि 'हम स्वराज तभी प्राप्त कर सकते हैं जब हम इन लोगों की किस्मत सुधार सकें। इस तरह की सीधी कार्रवाई में नागरिकों को किसी निश्चित समय और जगह पर व्यक्तिशः उपस्थित होना चाहिए।' 'इंटरनेट' और 'मोबाइल' संचार तकनीकों का उपयोग पिछले दशक में काफी फैला है। स्थानीय परिस्थितियों और विचारों का आदान-प्रदान करने के लिए 'फेसबुक' और 'व्हाट्सएप' का काफी हद तक व्यापक रूप से इस्तेमाल किया गया है। प्रशासन के साथ नागरिक भागीदारी में ये 'सोशल मीडिया' तीन प्रमुख कारक (प्रतिनिधित्व, संलग्नता और नेटवर्किंग/एसोसिएशन) का किरदार निभाते हैं। स्मार्ट फोन के उपयोग से एक नयी साक्ष्य आधारित भाषा और जानकारी का नेटवर्क युक्त प्रवाह बन गया है। निसंदेह, मान्य जानकारी के लिए ऐसे सोशल मीडिया पर नकली खबरें और डेटा एक बड़ी चिंता का विषय है।

आज, भारत के युवा लोग विभिन्न सामाजिक मुद्दों जैसे स्कूल, अस्पतालों, सार्वजनिक कार्यक्रमों का काम नहीं करना और भेदभाव के विरुद्ध सामाजिक न्याय कार्यवाही, महिलाओं और दलितों के विरुद्ध हिंसा, ग्रामीण, शहरी और आदिवासी क्षेत्रों में परियोजना प्रभावित लोगों के विस्थापन जैसे मुद्दों को उठाने के लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल कर रहे हैं। यदि ट्रोलिंग कारक को छोड़ दिया जाए, तो मौजूदा सामाजिक-आर्थिक स्थिति के बारे में सोशल मीडिया के माध्यम से लोगों की सच्ची आवाज़, नागरिक विरोध-कार्यवाही के नए माध्यम के रूप में उभर रही है। यह आभासी स्थान में हो सकता है, लामबंदी और संघटन की कमी हो सकती है, फिर भी, अनुभव यह पुष्टि करता है कि विभिन्न स्थानों, क्षेत्रों और पृष्ठभूमि की बाधा को दूर करते हुए एक साथ आने की उचित मात्रा, तथ्यों को खोजने और समुदाय की कार्रवाई उभर कर आ रही है। इस तरह की कार्यवाही किसी गैरकानूनी स्थिति के जवाब में सामान्य सुरक्षा कार्यवाही से ज्यादा लोगों को जोड़ती है। 'सोशल मीडिया' ने सीधे लोगों को व्यापक सार्वजनिक मंच पर जोड़ा है जहां वे कुछ ही मिनटों में हजारों लोगों के साथ होते हैं और उन तक पहुंचते हैं। इससे संबंधित अधिकारियों/लोगों/संस्थानों पर मुद्दों को हल करने का दबाव बढ़ता है। सार्वजनिक स्थान में व्यक्तिगत साक्ष्य डालना स्वयं एक सशक्तिकरण कार्य है और यह निवारण के लिए दबाव बढ़ाता है।

सहभागितापूर्ण कार्रवाई सशक्तिकरण, कल्पना और आलोचनात्मक विश्लेषण को प्रेरित करने के लिए एक प्रभावी तरीका साबित हुई है। आज हमारे पास छोटी वीडियो क्लिप/फिल्मों के कई उदाहरण हैं जो युवा लोगों द्वारा बनाई गई हैं जिनमें शक्तिशाली संदेश रहते हैं और यहां तक कि पुरस्कार भी जीतती हैं। सबसे हालिया और व्यापक रूप से ज्ञात महिलाओं के यौन उत्पीड़न के खिलाफ 'Me Too' अभियान है। जिन महिलाओं को किसी भी रूप में अपने जीवन में किसी भी समय पर यौन उत्पीड़न का सामना करना पड़ा है, उन्होंने समस्या की गंभीरता को दिखाने के लिए अपनी फेसबुक वॉल पर 'Me Too' लिखा। हजारों महिलाएं आगे आई और अपनी कहानियों को ऑनलाइन पोस्ट किया है। युवा लोग एक प्रमुख प्रतिनिधि हो सकते हैं जिनके आसपास लोगों की शिकायतों को आवाज देने के लिए सामुदायिक मीडिया प्रोजेक्ट तैयार किया जा सकता है। यह स्थानीय वास्तविकताओं को उचित रूप से एकत्रित कर सकता है और शक्तिशाली संदेश बना सकता है जो सरकार सहित विभिन्न हितधारकों को बदलाव के लिए कार्रवाई करने को प्रेरित कर सकता है। इस संपूर्ण मौके (स्पेस) का उपयोग नहीं किया गया है लेकिन इसमें जीवन में बदलाव लाने की काफी क्षमता है। ■

शिकायत निवारण प्रक्रियाः अनुभव और सीख

- दिलीप सिंह बिदावत और तौलाराम चौहान, उन्नति

इस लेख में राजस्थान के बाड़मेर जिले में सार्वजनिक कार्यक्रमों की पहुंच बढ़ाने के बारे में ईयू की सहायता वाली परियोजना के कार्यान्वयन के तहत लोगों को उनके मिलने वाले लाभों और हकों को प्राप्त करने के लिए सक्षम बनाने के लिए विभिन्न (सरकारी या गैर-सरकारी) शिकायत निवारण प्रक्रिया का उपयोग करने के अनुभवों और अवलोकनों को प्रस्तुत किया गया है। कार्यक्रम के कार्यान्वयन के दौरान पता चला कि लोगों को मिलने वाले लाभ प्राप्त करने के लिए योजनाओं और कार्यक्रमों के बारे में जानकारी प्रचारित करना या लोगों के द्वारा अपने अधिकारों और लाभों की मांग करना ही पर्याप्त नहीं है। लोगों द्वारा योजनाओं के लिए आवेदन करने के लिए, अपनी पात्रता साबित करने वाले दस्तावेज तैयार करने और सत्यापन और मंजूरी की जटिल प्रक्रिया को पूरा करने के लिए मदद की ज़रूरत होती है।

जिन लोगों को पूर्ण लाभ नहीं मिला हो या लाभ से वंचित रहे हों, उनको शिकायत निवारण प्रक्रिया की जरूरत होती है। आम तौर पर लोगों को जानकारी ही नहीं होती कि किससे संपर्क करना है या शिकायत कहां दर्ज करनी है। वे स्थानीय कर्मचारियों से मौखिक शिकायत करते हैं। लेकिन, स्थानीय कर्मचारी उन्हें उचित जवाब नहीं देते हैं या उनकी शिकायत को गंभीरता से नहीं लेते हैं। कई बार इन कर्मचारियों के पास प्रक्रिया के बारे में पर्याप्त जानकारी भी नहीं होती है। कभी-कभी लोग बिचौलियों की मदद लेते हैं और इसके लिए उन्हें अतिरिक्त पैसा देना पड़ता है। यदि कुछ लोग शिकायत दायर करने में सफल भी हो जाते हैं, तो भी उन्हें इस बारे में कोई जानकारी नहीं होती कि शिकायत की स्थिति जानने के लिए क्या करना है। गांव और ब्लॉक स्तर पर सार्वजनिक कार्यक्रम लागू करने वाले कर्मचारी ठीक से जवाब नहीं दते। इसके अलावा, समस्याओं को हल करने की कोई सामूहिक आम सहमति या मांग देखने को नहीं मिलती है। शिकायत दर्ज नहीं हो या उसका निराकरण नहीं हो, तो लोग निःसहायता अनुभव करते हैं और आखिरकार, सार्वजनिक कार्यक्रम कितना भी महत्वपूर्ण या मूल्यवान हो, फिर भी उन्हें अपना लाभ प्राप्त करने की प्रक्रिया को छोड़ देना पड़ता है। इसलिए, लोगों को शिकायतें दर्ज करने और उनकी स्थिति जानने के लिए सहायता प्रदान करना आवश्यक है, ताकि इसके लिए समुदाय की क्षमता में वृद्धि हो सके।

'उन्नति' द्वारा शुरू किए गए अभियानों, लोगों से मुलाकात करके और सूचना शिविरों के आधार पर और परियोजना के तहत तहसील स्तर पर स्थापित सूचना संसाधन केंद्रों (आईआरसी) और ग्राम में आयोजित समुदाय की बैठकों के दौरान लोगों द्वारा की गई शिकायतों के बारे में जानकारी प्राप्त की गई थी।

राजस्थान में सार्वजनिक कार्यक्रमों के लिए शिकायत निवारण की प्रक्रिया

लोग अपनी शिकायतें दर्ज कर सकें और उनकी स्थिति का पता कर सकें इसके लिए सरकार ने कई कानून और व्यवस्थाओं को लागू किया है, जिनके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं:

1. लोक सेवा गारंटीकृत डिलिवरी अधिनियम, 2011 - मिलने वाले लाभों, सेवा की गुणवत्ता और लोगों को सेवा के लाभ मिलने की समय सीमा को इंगित करता है।
2. सुनवाई का अधिकार अधिनियम, 2012 - ग्राम पंचायत, तहसील, जिला और राज्य स्तर पर शिकायत पंजीकरण और जन (लोक) सुनवाई के संबंध में है।
3. राजस्थान संपर्क निर्दिष्ट समय के भीतर शिकायत निवारण के लिए एकीकृत शिकायत समाधान प्रणाली है। यह एक ऑन-लाइन पोर्टल है और इस पर टोल-फ्री फ़ोन नंबर द्वारा भी संपर्क किया जा सकता है। जन सुनवाई में प्राप्त सभी शिकायतों को भी 24 घंटे के भीतर पोर्टल पर अपलोड करने का निर्देश दिया गया है, ताकि उस शिकायत की स्थिति का पता किया जा सके।
4. केंद्र सरकार द्वारा लोक शिकायत (पीजी) पोर्टल शुरू किया गया है।

5. विभिन्न सरकारी विभागों द्वारा अलग-अलग टोल फ्री नंबर शुरू किए गए हैं।
6. शिकायतों के निवारण के लिए तहसील और जिला स्तर के अधिकारियों के साथ आमने-सामने बातचीत की जा सकती है या लिखित आवेदन भेजा जा सकता है।

दायर शिकायत की स्थिति जानने की प्रक्रिया

शिकायत को संबंधित विभाग तक पहुंचाने के साथ ही उसकी स्थिति के बारे में जानकारी मिलना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। स्थिति की जानकारी मिलने से निराकरण की दर में वृद्धि हो सकती है।

परियोजना में शामिल प्रत्येक गांव में ग्राम रजिस्टर है। गांवों की मुलाकात के दौरान, शिकायतों को दिनांक के साथ दर्ज किया जाता है। प्रक्रिया के प्रत्येक चरण की गतिविधि दर्ज की जाती है। हल किए गए मामलों को भी नोट किया जाता है। रिकॉर्ड रखने की प्रक्रिया को सरल कर दिया गया है, ताकि लोग इस प्रक्रिया को अपने आप पूरा कर सकें। प्रत्येक प्रविष्टि में हाथ में ली गई शिकायतों, उन पर की गई कार्यवाही, उसकी स्थिति और शिकायत हल हो गयी या नहीं, क्या इसका विवरण रहता है। हर महीने गांव स्तर की सामुदायिक बैठकों के दौरान शिकायतों की स्थिति की जांच की जाती है। यदि शिकायतों का समाधान नहीं किया गया हो तो आगे कार्रवाई की जाती है।

ऑनलाइन पोर्टलों में दर्ज सभी शिकायतों को दर्ज करने की तारीख को ध्यान में रखते हुए, शिकायत की स्थिति का पता किया जाता है और क्या कार्रवाई की गई और आवेदन के संबंध में कार्रवाई कहां तक पहुंची इस पर निगरानी रखी जाती है। यदि प्रक्रिया और निराकरण में विलंब हो, तो यह भी ज्ञात किया जा सकता है। यह महत्वपूर्ण है, क्योंकि अगर मामला हल हो गया है और आवेदक उस समाधान से संतुष्ट नहीं है, तो यह जानना जरूरी है कि इस मामने में आगे कैसे आगे बढ़ा जाए। अगर आवेदन पर की गई कार्रवाई की स्थिति पर निगरानी रखी जाए, तो यह किया जा सकता है। कई बार मामलों को कुछ विभागों को भेजा जाता है और उन्हें जवाब देने के लिए कहा जाता है। ऐसा करने से शिकायत का समाधान नहीं होता है। इस प्रकार, यह जानने के बाद कि उचित कार्रवाई के बिना मामले को बंद कर दिया गया है, आगे कार्रवाई की जा सकती है।

विभिन्न व्यवस्थाओं के लिए शिकायत निवारण दर

नीचे दी गई तालिका में आमतौर पर सबसे अधिक व्यापक रूप से इस्तेमाल शिकायत निवारण प्रणाली का विश्लेषण किया गया है:

(1) राजस्थान संपर्क ऑनलाइन पोर्टल,
(2) शासन तंत्र के समक्ष व्यक्तिगत शिकायत (मौखिक और/या लिखित बयानी) और
(3) और जन सुनवाई और सरकारी शिकायत निवारण शिविर के दौरान पेश शिकायतें।

उपरोक्त सभी प्रणालियों का लोगों के लिए अलग-अलग महत्व हैं। व्यक्तिगत शिकायत की दर उच्चतम - 75 प्रतिशत है। हालांकि, यह पाया गया कि कठिन और जटिल मामला होने पर, और शासन-तंत्र को शिकायत करने के बाद ही लोगों द्वारा राजस्थान ऑनलाइन

शिकायत	राजस्थान संपर्क पोर्टल			अधिकारियों के सामने दायर शिकायत			सरकार द्वारा आयोजित शिविर और जन सुनवाई		
	पंजीकरण	समाधान	प्रतिशत	पंजीकरण	समाधान	प्रतिशत	पंजीकरण	समाधान	प्रतिशत
1. भुगतान नहीं और भुगतान में देरी	99	44	44	522	423	81	223	161	72
2. समुदाय लक्ष्यी सार्वजनिक योजनाओं की निष्क्रियता	9	2	22	11	8	72	1	0	0
3. भ्रष्टाचार	16	1	6	3	1	33	2	1	50
4. अन्य	29	17	58	80	31	39	34	7	21
कुल	169	64	38	618	463	75	260	169	65

पोर्टल का इस्तेमाल किया जाता है। यह पोर्टल एक नई व्यवस्था है और व्यक्ति की पहचान प्रकट नहीं करता है। इसके कारण, जटिल और गंभीर शिकायतों और लंबे समय से लंबित शिकायतों को दर्ज करते हुए व्यक्ति सुरक्षित अनुभव करता है।

मुख्य रूप से चार प्रकार की शिकायतें हैं:

(1) पेंशन, एमजीनरेगा के वेतन और छात्रों की छात्रवृत्ति भुगतान में देरी या भुगतान नहीं किया गया हो।

(2) आंगनवाड़ी जैसी सार्वजनिक योजनाएं निष्क्रिय हों, शिक्षक हाजिर ना रहते हों, सार्वजनिक वितरण प्रणाली में अनियमितता चल रही हो, आदि,

(3) मंजूरी और अनुमोदन के लिए भुगतान किया गया हो, और

(4) संपर्क सड़कों के निर्माण, जल आपूर्ति के लिए मांग, बिजली के बिल में वृद्धि आदि। कुल पंजीकृत शिकायतों में से 73.5 प्रतिशत को निपटाया गया था, जो बहुत उत्साहजनक है। इससे शिकायत निवारण प्रणाली की ताकत का अंदाजा लगाया जा सकता है।

संबंधित शासन तंत्र के पास मौखिक या लिखित शिकायत दायर करना सबसे लोकप्रिय तरीका है। कुल 1047 मामले दर्ज किए गए, जिनमें से 618 मामले - 59 प्रतिशत मामलों को इस तरीके से पंजीकृत किया गया। इस श्रेणी में शिकायत निवारण की दर भी बहुत अधिक - 75 प्रतिशत थी।

हालांकि, शिकायतें बहुत साधारण थी, जैसे कि पेंशन भुगतान आदि। संपर्क पोर्टल, टोल फ्री नंबर आदि पर शिकायत दर्ज करने की दर 16 प्रतिशत है। अधिकांशतया इस पद्धति का इस्तेमाल भ्रष्टाचार के मामले दर्ज करने के लिए किया गया था। यह विधि शिकायतकर्ता की पहचान प्रकट नहीं करती है, जिससे लोग बिना किसी डर के शिकायत कर सकते हैं। यह शिकायत दर्ज करने की नई पद्धति है और लोग अभी तक डिजिटल मोड से इतने वाकिफ भी नहीं हैं। जन सुनवाई और सरकारी अभियानों के द्वारा शिकायत दर्ज करने की दर 25 प्रतिशत थी। इस श्रृंखला में दर्ज मामलों में प्राधिकारियों के समक्ष मौखिक या लिखित शिकायतें शामिल थी। जब सरकारी मशीनरी गांवों तक अपनी पहुंच का विस्तार कर रही है तब आम आदमी भी अब मामला दर्ज कर सकता है। निवारण की दर भी बहुत अधिक है।

विभिन्न माध्यमों द्वारा शिकायत निवारण

ए. शासन तंत्र के समक्ष मौखिक या लिखित शिकायत

- पेंशन भुगतान, एमजीनरेगा के तहत वेतन भुगतान, जल आपूर्ति, आंगनबाड़ी और नर्सों की अनियमितताओं आदि से संबंधित शिकायतों का तत्काल निपटारा हुआ था।
- शिकायत से संबंधित सरकारी आदेशों, गवाहों की गवाही के साथ लिखित शिकायतों और नियमों और दिशानिर्देशों जैसे दस्तावेजों को प्रस्तुत करने से अधिकारियों ने त्वरित कार्रवाई की थी।
- सामूहिक दबाव डालने का तरीका भी उपयोगी रहा था।

चुनौतियां

आवास संबंधी भुगतान, भ्रष्टाचार, कर्मचारियों की कमी के कारण विभिन्न योजनाएं प्राप्त करने में देरी, सेवाएं प्रदान करने में अनियमितता आदि से संबंधित गंभीर मामलों में कोई कार्रवाई नहीं की गई थी। इसके अलावा, नीति स्तर के मुद्दों पर कोई कार्रवाई नहीं हुई थी।

बी. लोक सुनवाई और सरकारी शिकायत निवारण अभियान

लोक सुनवाई एक प्रभावी तरीका है। लोक सुनवाई के दौरान, आसान समस्याएं शीघ्र ही सुलझा ली गई थी। यह अभियान लोगों को अपनी शिकायत दर्ज करने का अवसर प्रदान करता है

चुनौतियां

जन सुनवाई के कारण कार्यवाही करने वाले अधिकारियों और कर्मचारियों को प्रभावी सेवा प्रदान करने के दबाव के बावजूद, कभी-कभी शिकायतों को बाद में कार्यवाही के लिए रखा जाता है, जिसके बाद वे हल नहीं होती हैं। सार्वजनिक मंच पर प्रस्तुति और कामकाज में देरी के कारण, स्थापित हितों को शिकायतकर्ता को अपनी शिकायत को वापस लेने के लिए मजबूर करने का मौका मिल जाता है।

सी. ऑनलाइन शिकायत निवारण व्यवस्था

राजस्थान संपर्क पोर्टल लोगों को फोन या लिखित रूप से अपनी शिकायत दर्ज करने के लिए विकल्प प्रदान करता है। यह राज्य स्तरीय शिकायत निवारण की निगरानी रखने वाली मजबूत व्यवस्था है। शिकायत दर्ज करवाने के 15 दिन में शिकायत की स्थिति को अद्यतन किया जाता है। साथ ही, शिकायत फिर से दर्ज करने का विकल्प भी उपलब्ध है। शिकायत हल हो गयी या नहीं, इस बारे में

उसके निपटान का रिकॉर्ड मामले को मजबूत करने के लिए पक्का सबूत है। यह सबूत क्रियावन्यन अधिकारियों पर दबाव डालता है।

चुनौतियां

समुदाय अभी तक ऑनलाइन सिस्टम का उपयोग करने में सक्षम नहीं है। शिकायत लिखने की शैली भी बहुत महत्वपूर्ण है, इसके अलावा शिकायत में कई भूलों के कारण शिकायत रद्द कर दी जाती है। यदि नियमित रूप से शिकायतों की स्थिति का पता नहीं चले, तो निराकरण में देरी होती है। कई बार ई-मित्र शिकायत दर्ज करने के लिए सरकार द्वारा निर्धारित शुल्क से अधिक पैसे लेते हैं। कभी-कभी, सेवा प्रदाता शिकायत निवारण की स्थिति का गलत विवरण देते हैं, जिसके कारण शिकायत का गलत ढंग से निपटारा हो जाता है।

शिकायत निवारण प्रणाली को मजबूत करने के लिए कदम:

1. निरंतरता सुनिश्चित करने के लिए, जन समूह को गांव स्तर पर शिकायतों पर कार्रवाई करने में सक्षम बनाना चाहिए। कुछ सदस्यों को इस संबंध में शिक्षण और प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए ताकि वे अपनी शिकायत तैयार कर सकें, उनका विश्लेषण कर सकें, और शिकायतों को दर्ज करने की विभिन्न व्यवस्थाओं का उपयोग कर सकें। समुदाय में शिकायत निवारण के विभिन्न चरणों और जिला और तहसील स्तर पर जन सुनवाई का उपयोग करने की समझ विकसित करनी चाहिए। गांव आधारित संगठन की क्षमता में वृद्धि करनी चाहिए ताकि वे राज्य स्तर पर अपनी शिकायतें पेश कर सकें।
2. शिकायत की स्थिति जानने की व्यवस्था आसान बनानी चाहिए।
3. नीति संबंधी प्रश्नों पर ध्यान केंद्रित करने के लिए राज्य स्तरीय नेटवर्क स्थापित किया जाना चाहिए। इस नेटवर्क के माध्यम से भ्रष्टाचार और अन्य विसंगतियों के मुद्दों को उठाया जाना चाहिए।
4. सुनवाई के अधिकार के तहत, पंचायत स्तर पर शिकायत पंजीकरण प्रणाली के प्रभावी ढंग से कार्यान्वयन के लिए राज्य स्तर पर मांग की जानी चाहिए।
5. सत्यापन की व्यवस्था को मजबूत करना आवश्यक है जिसमें शिकायतकर्ता को अपनी बात कहने का आखिरी मौका मिले।

प्रमुख मुद्दे

1. लोगों को अपने अधिकार और लाभ प्राप्त करने के लिए योजनाओं और कार्यक्रमों या लोगों द्वारा अपने अधिकारों की मांगों के बारे में जानकारी का प्रचार करना पर्याप्त नहीं है। जब लोगों को वास्तव में प्राप्त होने वाले अधिकार और लाभ प्राप्त होंगे, तभी पहुंच में सुधार का लक्ष्य प्राप्त हुआ माना जाएगा।
2. शिकायत निवारण की प्रणाली उन लोगों को सक्षम बनाती है जो लाभ से वंचित हैं या पूर्ण लाभ नहीं उठा पाए हैं।
3. लोगों को शिकायत निवारण प्रणाली का उपयोग करने के बारे में बहुत सीमित जानकारी और समझ है। दूसरी ओर, अधिकारी और कर्मचारी लोगों की शिकायतों को हल करने के लिए स्वयं को जवाबदेह नहीं मानते हैं।
4. निरंतरता सुनिश्चित करने के लिए, लोक समूह को गांव स्तर की शिकायतों पर कार्रवाई करने में सक्षम होना चाहिए।
5. यह सुनिश्चित करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि सूचना संबंधित विभाग तक पहुंचे, वह निपटान के स्तर तक पहुंचे तब तक उसकी जानकारी मिलते रहना भी उतना ही जरूरी है। स्थिति की नियमित रूप से जानकारी मिलते रहने से निराकरण दर में सुधार हो सकता है।
6. शिकायत से संबंधित सरकारी आदेशों, गवाहों की गवाही के साथ लिखित शिकायतों और नियमों और दिशानिर्देशों जैसे दस्तावेजों को प्रस्तुत करने से अधिकारियों ने त्वरित कार्रवाई की थी। इसी तरह, सामूहिक दबाव भी उपयोगी रहता है। ■

चंपारण सत्याग्रह पर एक नज़रः

असंगठित महिलाओं को संगठित करने में 'स्वाश्रयी महिला संघ - सेवा' की सीख

- मीराई चटर्जी

निदेशक, 'सेवा' सामाजिक सुरक्षा और अध्यक्ष, 'सेवा' सहकारी महासंघ

'गांधी और चंपारण सत्याग्रहः एक प्रयास, एक विरासत और समकालीन भारत' पर 'इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडी', शिमला में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत, 29-31 मई, 2017

चंपारण सत्याग्रह हमारी आजादी के आंदोलन में ऐतिहासिक क्षण था जो भारत और अन्य जगहों पर सामाजिक और आर्थिक न्याय के लिए आंदोलन को सूचित और प्रेरित करता रहा। एक ऐसा आंदोलन जो चंपारण सत्याग्रह और अधिक व्यापक रूप से, गांधीवादी विचार और कार्यों से प्रेरित है, वह अनौपचारिक महिला श्रमिकों का है, जिसका नेतृत्व भारत में स्वाश्रयी महिला संघ - 'सेवा' कर रहा है और अब यह अफ्रीका और दक्षिण और दक्षिण-पूर्वी एशिया में भी कार्यरत है।

'सेवा' का जन्म ही 1972 में टेक्सटाइल श्रमिक संघ (टीएलए) या 'मजूर महाजन' से हुआ था। 'मजूर महाजन' की स्थापना 1920 में गांधीजी और अनसूयाबेन साराभाई ने की थी। इससे पहले 1918 में कपड़ा कामगारों की दुर्दशा देखकर और अगस्त 1917 से जनवरी 1918 तक प्लेग की चरम अवधि के दौरान मिल मालिकों द्वारा दिए गए 'प्लेग बोनस' की वापसी पर गांधीजी और अनसूयाबेन ने श्रमिकों को 35 प्रतिशत वेतन वृद्धि के लिए हड़ताल करने के लिए संगठित किया। 'मजूर महाजन' की स्थापना से पहले, अनसूयाबेन ने खुद देखा कि कपड़ा मिल श्रमिक कैसे रहते थे और जीवित रहने के लिए संघर्ष करते थे, और उनके हितों को उनके अपने भाई, कपड़ा मिल-मालिक, अंबालाल साराभाई के सामने प्रस्तुत किया।

गांधीजी और अनसूयाबेन ने मिल श्रमिकों को संगठित किया और उनसे स्वास्थ्य, शिक्षा और सामाजिक समावेश जैसे मुद्दों को उठाने के लिए आग्रह किया, जैसा कि उन्होंने पहले चंपारण में किया था।

उस समय श्रमिक वकील और संगठनकर्ता, इलाबेन भट्ट 'मजूर महाजन' में शामिल हुई, लाखों श्रमिकों को संगठित किया। टीएलए ने कपड़ा मिल मालिकों के साथ सभी वार्ताओं में मिल मजदूरों का प्रतिनिधित्व किया तथा अहमदाबाद और गुजरात के सार्वजनिक जीवन और राजनीति के कई प्रमुख पहलुओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इलाबेन जल्द ही 'मजूर महाजन' की महिला विंग की निदेशक बन गई। उन्होंने कपड़ा मिलों में महिलाओं के लिए कौशल विकास कक्षाएं, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं का आयोजन किया। इसके बाद एक ठेला चलाने वाली, सुपाबाई उनसे मिलने आयी और अहमदाबाद के मुख्य कपड़ा बाजार में उनके साथ और अन्य महिलाओं से होने वाले अन्याय का वर्णन किया।

उसने बताया कि वह और अन्य महिलाएं अपने सिर पर कपड़े की गांठें ढोती हैं या शहर की व्यस्त सड़कों से उन्हें ठेले में खींचती हैं। 1960 के दशक के अंत में वे मुश्किल से प्रति दिन 50 पैसे की कमाई करती थी। इलाबेन को उनके संघर्ष और शोषण की कहानियों ने विचलित कर दिया, और सुपाबाई के साथ खुद बाजार में देखने गई। सुपाबाई विकासशील यूनियन, सेवा की 'राज कुमार शुक्ला' थी। राजकुमार शुक्ला हमेशा चंपारण में नील किसानों की दुर्दशा पर गांधीजी का ध्यान आकर्षित करने में अपनी दृढ़ता के लिए याद रखे जाएंगे। वैसे ही सुपाबाबाई हमेशा इलाबेन के साथ ऐसा करने के लिए सेवा के इतिहास में एक विशेष स्थान रखेंगी।

'माथोडा कामदार' सत्याग्रह और 'सेवा' का जन्म

गांधीजी और उनके सहयोगियों द्वारा चंपारण में कार्यरत रणनीति को याद करते हुए, इलाबेन ने ठेला चलाने वालों या 'माथोडा कामदार' से मुलाकात की, उनके जीवन और काम की परिस्थितियों का

सर्वेक्षण किया और सुपाबाई और अन्य लोगों को अधिक मजदूरी और बेहतर काम की परिस्थितियों के लिए मांगपत्र तैयार करने में मदद की। उनकी मांग 'पत्रक' या 'पत्रिका' में मुद्रित की गई थी, बहुत कुछ उसी तरह जो गांधीजी और अनसूयाबेन ने दशकों पहले मिल श्रमिकों के साथ किया था। कपड़ा बाजार में व्यापारियों ने नाराजगी व्यक्त की और इनकार किया कि सुपाबाई जैसे महिला श्रमिकों के साथ उनका कोई संबंध था। उन्होंने पत्रक और विज्ञापन के साथ जवाबी हमला शुरू किया जैसा 1918 में मिल श्रमिकों की हड़ताल के दौरान मिल-मालिकों ने किया था।

चूंकि कपड़ा बाजार में व्यापारियों के साथ किसी भी तरह की बात नहीं बन पाई, इसलिए ठेला चालकों ने सुपाबाई और इलाबेन के नेतृत्व में काम बंद कर दिया। यह शहर में अनौपचारिक महिला श्रमिकों के संगठित होने और सत्याग्रह करने का पहला उदाहरण था। काफी अधिक वार्ता और बातचीत के बाद, व्यापारियों ने ठेला चालकों की मजदूरी बढ़ाने पर सहमति व्यक्त की, और महत्वपूर्ण बात, त्रिपक्षीय प्रतिनिधित्वः श्रमिकों, नियोक्ताओं और श्रम विभाग के अधिकारियों के साथ एक 'मथोडा कामदार बोर्ड' की रचना हुई। यह बोर्ड आज भी काम कर रहा है, मजदूरी बढ़ाने, कल्याणकारी लाभ और बेहतर कामकाजी परिस्थितियों के लिए बातचीत करता है। गांधीजी की परंपरा में, और चंपारण में और कपड़ा कामगारों की हड़ताल के दौरान उनके द्वारा शुरू की गई मध्यस्थता प्रक्रिया की ही तरह, बोर्ड पारदर्शी तरीके से सभी संबंधित समूहों के साथ बातचीत और वार्ता के सिद्धांतों पर काम करता है।

'मथोडा कामदार' संघर्ष की एक और खास बात ठेला चालकों द्वारा व्यावसायिक खतरों का सामना करना था, और तथ्य यह था कि इसके निवारण के लिए वे कहीं भी नहीं जा सकती थी। महिलाओं के सर्वेक्षणों और प्रमाणों से, इलाबेन को पता चला कि उनका अक्सर गर्भपात हो जाता था, क्योंकि जब उन्हें अपने ठेले को रोकना पड़ता था तो वे अपने निचले पेट को ब्रेक के रूप में इस्तेमाल करती थी। गाड़ियों के क्रॉस बार से पेट के निचले हिस्से पर दबाव बढ़ता था और गर्भपात हो जाता था, साथ ही उनके स्वास्थ्य और पोषण स्थिति खराब रहती थी, और यह तथ्य कि वे अपने गर्भावस्था के आखरी चरणों में कठिन परिश्रम करती रहती थी। उन्हें ना कोई साप्ताहिक अवकाश मिलता था, न ही बीमारी की छुट्टी और ना ही कोई चिकित्सा लाभ मिलता था। अब के जैसे मातृत्व लाभ और मातृत्व अवकाश 'माथोडा कामदार' जैसी अनौपचारिक महिला श्रमिकों के लिए एक दूर का सपना था।

उन्होंने महिलाओं के लिए नयी और सुरक्षित ठेला (गाड़ी) विकसित करने के लिए 'नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ डिज़ाइन' (एनआईडी) से अपील की, और श्रमिकों की स्वास्थ्य स्थितियों का अध्ययन करने के लिए 'नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ ऑक्यूपेशनल हेल्थ' (एनआईओएच) से अपील की। यह पहली बार था जब एनआईडी और एनआईओएच दोनों ठेला-चालकों के स्वास्थ्य में सुधार लाने और गर्भपात और अन्य चोटों को रोकने के लिए 'सेवा' के साथ भागीदारी करने पर सहमत हुए थे। इलाबेन ने यह भी देखा कि काम के दौरान महिलाओं के साथ अक्सर दुर्घटनाएं होती थी और चोट लग जाती थीं। जब उन्हें फ्रैक्चर हो जाता था या जब कोई वाहन उन्हें टक्कर मार देता था, तो उनके पास सहायता के लिए जाने के लिए कोई जगह नहीं थी? कामगार मुआवजा अधिनियम इन महिलाओं को श्रमिक नहीं मानता था, और इसलिए वे मुआवज़े के लिए अदालतों में नहीं जा सकती थी।

तब इलाबेन को सुपाबाई और उसकी जैसे अन्य लाखों महिलाओं पर हो रहे अन्याय और शोषण की जानकारी हुई। वे अक्सर याद करती हैंः 'सुपाबाई, फिर बाद में चंदाबेन और करीमाबेन को धन्यवाद, जिनकी वजह से अनौपचारिक श्रमिकों की विशेष रूप से महिलाओं की वास्तविकताओं और संघर्षों के प्रति मेरी आँखें खुली, जो सबसे खतरनाक काम करती हैं, जिन्हें पुरुष कभी नहीं करेंगे। और उन्हें कम से कम व मामूली भुगतान किया जाता है।' यह बात अहमदाबाद में आग की तरह फैल गई कि एक युवा महिला वकील - इलाबेन - अनौपचारिक अर्थव्यवस्था की महिला श्रमिकों के लिए काम कर रही थी। जल्द ही सुपाबाई जैसी अनौपचारिक महिला कामगारों ने संघर्ष और अन्याय की अपनी कहानियों के साथ टीएलए से समर्थन के लिए अनुरोध किया।

तेज और चतुर पुराने कपड़े बेचने वाली चंदाबेन ने इलाबेन को बताया कि बड़े व्यापारियों और साहूकारों ने कैसे उनके जैसे विक्रेताओं

का शोषण किया, जिन्हें कार्यशील पूंजी की सख्त जरूरत थी। गोदावरीबेन और करीमाबेन घरेलू श्रमिक थी और उन्हें क्रमशः कमर तोड़ बीड़ी बनाने और पैचवर्क वाली रजाई या 'खोल' की सिलाई के काम के लिए मामली भुगतान किया जाता था। मुख्य माणेक चौक बाजार की एक सब्जी विक्रेता लक्ष्मीबेन ने कहा कि नगरपालिका के अधिकारी और पुलिस उन्हें लगातार परेशान करती है और उनसे रिश्वत लेती है।

इसके बाद उन्होंने अनौपचारिक महिला श्रमिकों के एक अलग यूनियन (संघ) सेवा - का पंजीकरण करने का निर्णय लिया क्योंकि कपड़ा मिल श्रमिकों की तुलना में उनका काम बहुत अलग था। ये श्रमिक दशकों से संगठित थे और कठिन संघर्षों के बाद न्यूनतम मजदूरी, साप्ताहिक छुट्टी, बीमारी की छुट्टी और अन्य कल्याणकारी फायदे आदि से लाभान्वित हुए थे। अनौपचारिक महिला श्रमिकों को इनमें से कोई भी लाभ नहीं मिलता था, और आज भी थोड़ा ही मिलता है। हमारे संघ के प्रथम सदस्यों के रूप में सुपाबाई, चंदाबेन, करीमाबेन और कुछ हजार अन्य महिलाओं के साथ साबरमती नदी के किनारे पर सेवा का गठन लोक मान्य तिलक उद्यान में एक नीम के पेड़ के नीचे हुआ। यह कोचरब आश्रम से बिल्कुल पास है जहां दक्षिण अफ्रीका से आने पर गांधीजी सबसे पहले रहे थे और काम करते थे और साबरमती आश्रम से थोड़ी दूरी पर था, जिसे 17 जून, 1917 में चंपारण सत्याग्रह के तुरंत बाद स्थापित किया गया था।

महिला श्रमिकों की यूनियन बनाना, जिसमें ज्यादातर स्व-रोजगार वाली थी, जिनके कुछ निश्चित नियोक्ता-कर्मचारी रिश्ते नहीं थे, खुद ही एक लंबा संघर्ष था। श्रम विभाग के अधिकारी भी यह विश्वास करने के लिए तैयार नहीं थे कि ये महिलाएं अपने आप में श्रमिक थीं। एक जेन्डर आयाम भी था। श्रमिक अधिकारियों ने तर्क दिया कि ये महिलाएं एक 'शौक' के रूप में बीड़ी बना रही थी या कपड़े सिलाई कर रही थी! निरंतरता, धैर्य, अनौपचारिक श्रमिकों के साक्ष्यों और छोटे सर्वेक्षणों के साथ, विशाल अनौपचारिक कर्मचारियों की झलक प्रदान करते हुए, श्रम अधिकारी धीरे-धीरे आश्वस्त हो गए।

12 अप्रैल, 1972 को, 'सेवा' को औपचारिक रूप से भारत, और संभवतः विश्व के पहले अनौपचारिक महिला श्रमिक संघ के रूप में पंजीकृत किया गया था ।

माणेक चौक सत्याग्रह

'सेवा' का दूसरा सत्याग्रह 1982 में अब प्रसिद्ध माणेक चौक फुटपाथ विक्रेताओं का संघर्ष था। लक्ष्मीबेन जैसे उद्यमी और जीवंत फुटपाथ विक्रेताओं ने माणेक चौक के सब्जी विक्रेताओं का नेतृत्व किया, और चंदाबेन ने तीन दरवाजा और दिल्ली चकला के पुराने कपड़ा विक्रेताओं का नेतृत्व किया। वे इलाबेन को बाजार में अपनी समस्याएं बता रही थी। लक्ष्मीबेन और अन्य लोग पीढ़ियों से सब्जियां बेच रहे थे। जैसा कि माणेक चौक बाजार में यातायात के साथ भीड़ होती है, अचानक उन्हें 'परेशानी' और 'यातायात रुकावट' समझा जाने लगा। उन्हें नियमित रूप से पुलिस और नगरपालिका के अधिकारियों द्वारा बेदखल किया जाता था, वैसा ही चंदाबेन और अन्य पुराने कपड़े विक्रेताओं के साथ किया जाता था। एक पुलिसकर्मी ने उन सब्जियों के साथ एक छोटा सा रेस्तरां भी खोला था, जिनको विक्रेताओं से नियमित रूप से जब्त किया जाता था। विक्रेताओं को बाजार में बैठकर बेचने की अनुमति देने के लिए रिश्वत लेना आम बात थी। लक्ष्मीबेन और इलाबेन ने रणनीति बनाई। उन्होंने पुलिस और नगर पालिका के साथ बातचीत करने की कोशिश की लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ।

उन्होंने सत्याग्रह करने का फैसला किया। वे व्यस्त माणेक चौक बाजार में सड़क पर लेट जाते थे, और पुलिस और नगर पालिका को हटाने की चुनौती देते थे, और तर्क देते थे कि उन्हें अपनी आजीविका का बचाव करने का अधिकार था। 'मथोडा कामदार' हड़ताल की तरह, यह सत्याग्रह शहर में चर्चा का विषय बन गया। वार्ता फिर से शुरू हुई, लेकिन लंबे समय तक नहीं चली। अंत में, देश के उच्चतम न्यायालय, सर्वोच्च न्यायालय का सहारा लेकर, सेवा ने एक याचिका दायर की। अपने वकील, युवा इंदिरा जयसिंह के साथ खड़े होने के लिए लक्ष्मीबेन, शांतिबान और इलाबेन अदालत में उपस्थित होने के लिए दिल्ली गई। कई सालों बाद, लक्ष्मीबेन अदालती क्लर्कों के चकित चेहरे को याद करती हैं: 'उन्होंने हमारे जैसी महिलाओं को कभी भी सुप्रीम कोर्ट की दहलीज पार करते नहीं देखा था! न्यायाधीश हमें देखकर हैरान थे, लेकिन हमें धैर्यपूर्वक सुना। और हमने केस

जीता। जब तक उचित वैकल्पिक बाज़ार-स्थान नहीं दिया जाता तब तक हमें हटाया नहीं जाएगा। क्या जीत थी!'

माणेक चौक सत्याग्रह और सर्वोच्च न्यायालय में मामला न केवल अपनी तरह का पहला था, बल्कि इसने भावी फुटपाथ विक्रेताओं के संघर्षों के लिए भी एक बेंचमार्क के रूप में भी काम किया। इससे देश भर में फुटपाथ विक्रेताओं और उनकी कामकाजी परिस्थितियों के कई सर्वेक्षण हुए। आखिरकार, विक्रेताओं के डेटा और प्रमाण पत्र ने 'नेशनल एसोसिएशन ऑफ़ स्ट्रीटवेन्डर्स ऑफ इंडिया' (नासवी) और बाद में, स्ट्रीटनेट, सभी महाद्वीपों पर फुटपाथ विक्रेताओं के एक अंतरराष्ट्रीय संगठन का गठन किया।

चालीस वर्षों के संघर्ष, अदालती मामलों, धरनों और सत्याग्रहों के बाद, फुटपाथ विक्रेताओं को आखिरकार 2014 में कानून मिला जिसका सपना उन्होंने कई सालों पहले देखा था। फिर से, चंपारण सत्याग्रह की तरह, माणेक चौक सत्याग्रह, न्याय और हमारे शहरों के बाजारों में 'दो टोकरी की जगह' के लिए फुटपाथ विक्रेताओं का संघर्ष ऐतिहासिक घटना बन गई। माणेक चौक सत्याग्रह ने डरबन, दक्षिण अफ्रीका, घाना अकरा में और पेरू में लीमा में इसी तरह के आंदोलन को दिशा दी।

'सेवा' का खेड़ा सत्याग्रह

खेड़ा हमेशा हमारे स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में विशेष रहा है। यह 'सेवा' के इतिहास में भी हमेशा विशेष रहा है। शायद इसका सिंचाई नहरों के जाल वाले सब्ज़ ग्रामीण इलाकों के साथ लेना-देना था जो कृषि के लिए आदर्श हैं, और छोटे और बड़े दोनों किसानों के लिए उपलब्ध थे।

1918 में गांधीजी, सरदार पटेल और अन्य स्थानीय नेताओं जैसे रविशंकर व्यास, नरहरी पारिख और मोहनलाल पंड्या ने खेड़ा सत्याग्रह का नेतृत्व किया। उन्होंने उस समय पड़े अकाल के बावजूद लगाए गए करों के खिलाफ किसानों और खेतिहरों को संगठित किया था। यह खेड़ा किसानों के खिलाफ जिला मशीनरी और साम्राज्य की ताकत के साथ एक कठिन संघर्ष था। सेवा के लिए भी, यह खेड़ा में अधिकार के खिलाफ ताकत का लंबा संघर्ष रहा है।

'सेवा' के इतिहास में खेड़ा अध्याय एक अन्य 'सेवा' के राज कुमार शुक्ल', इंदिरा मेकवान ने शुरू किया था। वह स्वयं जिले की तम्बाकू श्रमिक थी, बड़े जमींदारों के हरी तंबाकू के खेतों, और बाद में 'खली' नामक प्रसंस्करण इकाइयों पर काम करती थी। इंदिराबेन अहमदाबाद में 'सेवा' के सभी सदस्यों, अनुबंध श्रमिकों की एक सशक्त और बेखौफ संगठनकर्ता साबित हुई। अब वह अपने पैतृक गांव, चिखोद्रा में महिलाओं को संगठित करने के लिए उत्सुक थी और इलाबेन को तम्बाकू श्रमिकों पर हो रहे बहुत से अन्यायों के बारे में बताया, जिनमें से अधिकांश महिलाएं थीं। न केवल उन्हें निर्धारित न्यूनतम मजदूरी का भुगतान नहीं किया जा रहा था, बल्कि उनके छोटे बच्चों के लिए उनके पास कोई क्रेश नहीं था, जिन्हें उन्हें खेतों और कारखानों तक ले जाना पड़ता था, उन्हें जहरीले निकोटीन और हानिकारक तंबाकू की धूल फांकनी पड़ती थी। बड़े किसानों और 'खली' मालिकों के ठगों द्वारा यौन शोषण और उत्पीड़न की बात भी सुनने में आ रही थी।

चंपारण सत्याग्रह की रणनीतियों और सेवा के अपने पहले के संघर्षों से सीख लेते हुए, 'सेवा' की तत्कालीन सचिव रेनाना झाबवाला 1986 में इंदिराबेन के साथ खुद श्रमिकों की परिस्थितियों को देखने के लिए गई। एक युवा और नई संगठनकर्ता के रूप में, मैं भी उनके साथ गयी और श्रमिकों के साथ बैठक में भाग लिया। उन्हें हमारे साथ बैठने और बात करने से ही अपना काम खोने का डर था और इसके अलावा, वे बाहरी लोगों पर भरोसा कैसे कर सकते थे जो अन्याय के खिलाफ संगठित होने का आह्वान कर रहे थे? हालांकि इंदिराबेन उनकी अपनी थी, लेकिन वे सावधान थे। मुझे उनका कहा याद है: 'यदि हम अपने को संगठित और संघ का निर्माण करते हैं, तो हमारे बच्चों को कौन खिलाएगा? हमारे पास जो काम है उसे भी हम खो देंगे।'

हमने उनकी कामकाजी परिस्थितियों और उनकी जरूरतों का सर्वेक्षण करने का संकल्प लिया। बाल देखभाल एक शीर्ष प्राथमिकता के रूप में उभरी। मुझे इंदिराबेन के साथ श्रमिकों के छोटे बच्चों के लिए क्रेश बनाने का काम सौंपा गया था। महिलाएं उत्सुक थी कि हम इसे उठाएं और कुछ काम प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के लिए भी करें। तंबाकू की धूल की वजह से उन्हें पुरानी खांसी और सांस नली में जलन

होती थी, और निकोटीन के भी कई प्रभाव थे जैसे भूख नहीं लगना, चक्कर आना और माहवारी चक्र का बाधित होना। हमने कुछ तम्बाकू श्रमिकों को अपने गांवों के स्वास्थ्य कर्मियों के रूप में प्रशिक्षण दिया था। उनमें से कुछ और क्रेश कार्यकर्ता बाद में हमारे सबसे साहसी सत्याग्रही निकले।

फिर, चंपारण में गांधीजी के अनुभवों से और बाद में अहमदाबाद कपड़ा श्रमिकों की हड़ताल से सीखने के बाद, हमने तम्बाकू श्रमिकों के लिए क्रेश के रूप में रचनात्मक कार्यवाही की। तम्बाकू श्रमिक, सुमनबेन और शारदाबेन हमारी पहली क्रेश शिक्षक थी। वे केंद्रों को चलाने के लिए उत्साही रूप से प्रशिक्षण में भाग लेती थी और छोटे बच्चों की समग्र रूप से देखभाल करती थी। चिखोद्रा में एक क्रेश से, हमने आसपास के गांवों में और क्रेश खोले। हमने बच्चों के लिए भोजन, उपकरण और खिलौनों के मामले में सहायता के लिए कुछ बड़े जमींदारों और 'खली मालिकों' से संपर्क किया। हमें यह जानकर हैरानी हुई कि वे क्रेश में सहायता करने के लिए तैयार थे, हालांकि उन्होंने हमें चेतावनी दी थी: 'अब न्यूनतम मजदूरी की मांग नहीं करना! लेकिन बच्चों के लिए हम आपकी सहायता करेंगे।'

क्रेश ने खेडा तम्बाकू श्रमिकों और हमारे, उनके अहमदाबाद स्थित सहयोगियों के बीच भरोसा पैदा किया। शायद यह इसलिए कि उनके लिए जो सबसे अधिक मूल्यवान, उनके बच्चों को हमें सौंपा, और क्योंकि यह एक उपयोगी सेवा थी। हमने उनकी जरूरतों और क्रेश के प्रभाव का अध्ययन किया। गरीबी के खिलाफ लड़ाई और आत्मनिर्भरता के लिए यह एक आवश्यक सेवा के रूप में उभर कर आई। महिला ने कहा कि इससे 'मन की शांति' हो गई और वे बाहर जाकर कमा सकती हैं और अपने बच्चों के लिए खाना ला सकती हैं। जैसे ही उनके छोटे भाई सेवा के क्रेश में जाने लगे 70 फीसदी बड़े भाई-बहन, विशेष रूप से लड़कियां, पहली बार स्कूल गई। इसके अलावा बेहतर स्वास्थ्य और पोषण स्तर, सीखने की खुशी का अनुभव और स्कूल के लिए तैयार होना आदि जैसे कई फायदे हुए।

इसके अलावा, धीरे-धीरे श्रमिकों ने कई अन्यायों से निपटने के लिए संगठन और सामूहिक कार्रवाई की शक्ति को समझ लिया। उन्होंने देखा कि उनकी सौदेबाजी की ताकत में कितनी वृद्धि हुई है, और उन्हें न्यूनतम मजदूरी और अन्य देय लाभ की मांग करने की ताकत मिली। क्रेश, प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल कार्य, और बाद में स्व-सहायता समूह (एसएचजी) बनाना, मेरा मानना है कि यूनियन बनाने के लिए महत्वपूर्ण 'प्रवेश बिंदु' थे। इससे आपस में, अपने स्वयं के संगठन में विश्वास का निर्माण हुआ और अन्याय का सामना करने की अपनी क्षमता में विश्वास पैदा हुआ।

खेड़ा की हमारी कई बहनों ने 'सेवा' के खेड़ा सत्याग्रह का नेतृत्व किया। रसनोल गांव में 1995 में यूनियन की कार्रवाई के बाद, 'खली मालिकों' ने अंततः मजदूरों को श्रम निरीक्षकों के सामने निर्धारित न्यूनतम मजदूरी दे दी। लेकिन बाद में उन्होंने महिलाओं को बताया कि 'खली' के पीछे के दरवाज़े से पैसे वापस कर दो! माताओं के नेतृत्व में, जिनके बच्चों की क्रेश में देखभाल की जा रही थी, श्रमिकों ने इनकार कर दिया। उन्होंने सामना किया और 'खली' के बाहर 'धरने' पर बैठे। 'खली मालिक' इस दुस्साहस पर दंग रह गए थे! उन्होंने समर्थन के लिए अन्य 'खली मालिकों' को फोन किया। 'सेवा' के संघटन के जवाब में पहले से ही 'खली मालिक' संघ का गठन कर लिया गया था। एसोसिएशन के नेता रसनोल रवाना हुए। बाद में मजदूरों ने मजाक उड़ाया कि उन्होंने कभी अपने गाँव में इतनी कारों को एकसाथ नहीं देखा था! महिलाएं अडिग रही और अपना सत्याग्रह जारी रखा, गाते हुए और एक दूसरे को ढाढस देते हुए। आखिरकार जिला प्रशासन ने गतिरोध समाप्त करने के लिए हस्तक्षेप किया और महिलाओं ने अपनी मजदूरी अपने पास रखी।

उस दिन से, हमारे और 'खली मालिकों' के बीच बहुत कुछ बदल गया। वे बातचीत करने के लिए और अधिक इच्छुक थे, क्रेश के लिए अधिक उदारता से योगदान करते थे और इस पहल की सराहना करते थे, और बातचीत के लिए अच्छा वातावरण बन गया था। तम्बाकू को कम करने की मांग करने पर, उन्होंने केला और आलू जैसी अन्य फसलों को भी उगाना शुरू कर दिया। इस बीच, महिलाएं जमींदारों और 'खली मालिकों' पर अपनी आजीविका के लिए पूरी तरह निर्भर नहीं रह गई थीं। उन्होंने अपनी मजबूत एसोसियेशन एसएचजी की स्थापना की, बचत की, बीज और अन्य चीजें खरीदने के लिए ऋण लिया, और अपने छोटी सी जमीन पर खेती शुरू कर दी। उनमें से कुछ ने सेवा द्वारा हथकरघा निगम से धागा पाने में मदद

करने और लूम के लिए उनके पास बचत और ऋण होने पर फिर से बुनाई शुरू कर दी और स्वयं की इकाई स्थापित कर ली। तंबाकू श्रमिकों की बेटियों ने हमारे क्रेश में शुरूआत की थी, वे अब नर्स बन गईं, डेटा एन्ट्री ऑपरेटर आदि बन गई।

'सेवा' के खेड़ा सत्याग्रह ने अन्याय और शोषण से लड़ने के लिए कई तरह की पहल की शुरुआत की और वैकल्पिक आजीविका और व्यवसायों के विकास के माध्यम से, और कौशल विकास और, महिलाओं के लिए स्वास्थ्य देखभाल, बाल देखभाल और लघु बीमा जैसी सामाजिक सुरक्षा के लिए साझेदारी बनाने के नए तरीके से शुरू किए। खेड़ा के बचत और ऋण संघ की अब हजारों सदस्य हैं, जिनकी करोड़ों में सामूहिक बचत होती है। ऋण एसोसिएशन को एक प्रसार प्रदान करते हैं, जिससे, संघ और यूनियन दोनों को वित्तीय स्थिरता मिलती है। क्रेश शिक्षक और माताएं एक सहकारिता में एक-साथ आए जो बाल देखभाल सेवाओं और छोटे बच्चों को, और अब वयस्कों को भी पौष्टिक भोजन प्रदान करता है। बचत और क्रेडिट एसोसिएशन के साथ यह एक सफल स्वयं सहायता प्रयास है। इस प्रकार, हमारे खेड़ा सत्याग्रह ने गाँधीजी के संघर्ष और विकास दोनों के विचारों को शामिल किया, जिसमें सबसे गरीब और सबसे कमजोर को आगे रखा गया।

विज्ञान भवन सत्याग्रह

अनौपचारिक श्रमिकों, विशेष रूप से महिलाओं के साथ होने वाला एक सबसे खराब अन्याय यह है कि उनके काम और योगदान को मान्यता नहीं मिलती, उसे बहुत कम स्वीकार किया जाता है। यहां तक कि मुख्यधारा के श्रम आंदोलन ने भी अनौपचारिक महिला श्रमिकों के संगठन के महत्व को समझने में बहुत समय लगाया। महिलाओं के काम की बहुत अलग दुनिया के साथ, यह शायद आश्चर्य की बात है। यहां तक कि अनुभवी श्रम संगठनकर्ताओं को भी महिलाओं के काम, वैतनिक और अवैतनिक, और संगठन के प्रयासों को स्वीकार करने में काफी समय लगा। विशेष रूप से खराब यह रहा कि सेवा और हमारे सदस्यों को विभिन्न श्रम संघों और सामूहिक प्लेटफार्मों द्वारा बहिष्कार किया गया। ऐसा ही एक भारतीय श्रम सम्मेलन, आईएलसी था। नई दिल्ली में विज्ञान भवन में हर वर्ष आयोजित, यह एक त्रिपक्षीय मंच है, जहां संघों और उनके प्रतिनिधि, नियोक्ता और उनके प्रतिनिधि और सरकार के श्रमिक अधिकारी मिलते हैं और आम कार्रवाई बिंदु खोजने की कोशिश करते हैं।

'सेवा' ने आईएलसी से कहा कि हमें होने वाली चर्चाओं में एक पूर्ण भागीदार के रूप में शामिल किया जाए। हम यह देखने के लिए उत्सुक थे कि अनौपचारिक महिला श्रमिकों के मुद्दों को मुख्य स्थान मिले। हमें आमंत्रित नहीं किया गया। हमने दिल्ली से भी आगे जाने का फैसला किया।

25 सेवा कार्यकर्ताओं की संपूर्ण निर्वाचित कार्यकारी समिति जनवरी, 1995 में विज्ञान भवन पहुंची। हमारा हौसला बुलंद था और हमें उम्मीद थी कि हमें विचार-विमर्श के लिए आमंत्रित किया जाएगा। हमने श्रमिक नेताओं, नियोक्ताओं और सरकारी अधिकारियों को परिसर में प्रवेश करते देखा और हम बाहर खड़े रहे। जब हमें लगा कि हमें अंदर नहीं जाने दिया जाएगा, तो हम विज्ञान भवन के बाहर फुटपाथ पर धरने पर बैठ गए। हमने अपनी सर्व धर्म प्रार्थना की, जैसा गांधी जी ने हमें सिखाया था, और हमारे मनोबल को उच्च रखने के लिए गाते रहे। पुलिस आई और हमें गिरफ्तार कर लिया और हमें पास के पुलिस स्टेशन में ले गई। हम गाते रहे और एकता के नारे - 'हम सब एक हैं! सेवा संगठन ज़िंदाबाद' लगाते रहे! पुलिस को हमारे काम के प्रति सहानुभूति थी और चारों ओर चाय और उत्साह का अच्छा माहौल था। हमने ग्यारह प्रतिज्ञाओं - सत्य, अहिंसा, सर्वधर्म, स्वदेशी और निडरता, आदि को पालन करने की शपथ ली जिन्हें गांधी जी ने बहुत पहले साबरमती आश्रम में विकसित किया था।

उस वर्ष, हमारे सत्याग्रह के बावजूद, हमें आईएलसी में आमंत्रित नहीं किया गया। बाद में हमने भारत की सबसे बड़ी अनौपचारिक महिला श्रमिकों के प्रमुख संघ के रूप में प्रवेश की मांग की। इस बीच, हमने अपने आंदोलन को मजबूत किया और 14 राज्यों में 20 लाख सदस्यों के साथ राष्ट्रीय संघ में रूपांतरित किया और जिसमें कृषि और निर्माण जैसी अर्थव्यवस्था के सभी प्रमुख क्षेत्र शामिल थे। जब हम कोर सेक्टरों और कुछ राज्यों में 5 लाख श्रमिकों की सदस्यता पार कर गए, तो हमें आईएलसी और अन्य मंचों में भाग लेने के पूर्ण अधिकार के साथ एक राष्ट्रीय यूनियन के रूप में स्वीकार किया

गया। आखिर में, एक अनौपचारिक महिला श्रमिक यूनियन, सेवा, ने भारत के मुख्यधारा के श्रम आंदोलन में प्रवेश किया, असंगठितों को संगठित करने में अपने अनुभवों और रणनीतियों को साझा किया, और इस प्रमुख राष्ट्रीय श्रम मंच, आईएलसी में अपनी मांगों और मुद्दों को उठाया।

चंपारण सत्याग्रह पर एक नज़र और उससे सीख

आज, पहले से कहीं ज्यादा, हमें चंपारण सत्याग्रह के इतिहास की समीक्षा करनी है और अपने सार्वजनिक जीवन में इसके सबक को शामिल करने की आवश्यकता है।

अमीर और गरीब के बीच का अंतर लगातार बढ़ रहा है, और हम भारत में अर्थव्यवस्था और समाज की मुख्यधारा में अपने सभी नागरिकों, विशेषकर महिलाओं को शामिल करने में सफल नहीं हुए हैं। अधिकांश काम करने वाले गरीबों, विशेष रूप से दलितों, आदिवासियों, अल्पसंख्यकों और अन्य जातियों और समुदायों को कार्य और सामाजिक सुरक्षा के साथ आय सुरक्षा नहीं मिल रही है, जो विशाल अनौपचारिक अर्थव्यवस्था का हिस्सा हैं, और हमारे कर्मचारियों का 93 प्रतिशत हैं। महिला श्रमिक सबसे गरीब और सबसे ज्यादा शोषित रहती हैं, और जब 'सेवा' ने अपना काम शुरू किया, तब उनके कार्य को चालीस साल पहले मान्यता दी गई थी, फिर भी हमें एक लंबा रास्ता तय करना बाकी है।

गांधीजी ने हमसे 'दूसरी आजादी' - गरीबी और भूख से स्वतंत्रता के लिए काम करने का आग्रह किया था। चंपारण सत्याग्रह की शताब्दी हमें याद दिलाती है कि हमने कितना लंबा मार्ग तय किया है, और अभी भी कितनी दूर जाना है। नील किसानों का शोषण अतीत की बात है। लेकिन छोटे और सीमांत किसान और भूमिहीन कृषि श्रमिक हमारे अपने साथी नागरिकों के हाथों कई तरह के अन्याय और शोषण का सामना करते हैं। हर दिन बड़े और छोटे सत्याग्रह हमें पूरे देश में चंपारण की याद दिलाते हैं - चाहे वह कई राज्यों में अपनी पवित्र भूमि पर खनन रोकने के लिए न्यामगिरि और स्थानीय आदिवासियों का संघर्ष हो, मछुआरों द्वारा बड़े ट्रॉलरों का विरोध करके अपनी आजीविका के अधिकार को बरकरार रखने की लड़ाई हो, या किसानों और अन्य लोगों द्वारा बिचौलियों से मुक्त होने की मशक्कत हो जो उनकी उपज की कीमतों को नियंत्रित करते हैं।

'सेवा' में, हमने गांधीजी के नेतृत्व में हुए चंपारण सत्याग्रह और अन्य संघर्षों से सबक को आत्मसात किया है। उनके कुछ दृष्टिकोण और रणनीतियां अब हमसे गहराई से जुड़ी हुई हैं। सबसे पहले, हम हमारे सभी संघटन और सत्याग्रह भी सर्वेक्षणों, समूह चर्चाओं, घर-घर जाकर मुलाकात करके आदि के माध्यम से गहराई से तथ्यात्मक खोज के द्वारा शुरू करते हैं।

गांधीजी से सीखते हुए, हमारे लिए हमारे सदस्य हमारे सभी प्रयासों के केंद्रबिंदु हैं। हम उनकी चिंताओं, मांगों और ज़रूरतों को ध्यान से सुनते हैं। हमारे पूरे इतिहास में, सर्वेक्षण और इस तरह की जानकारी और आंकड़े इकट्ठा करना हमारे संघर्षों के लिए महत्वपूर्ण रहे हैं। जब वर्षों पहले श्रम विभाग के पास बीड़ी कामगारों के आंकड़े नहीं थे, तो यह तर्क दिया गया कि विशेष कल्याणकारी योजनाएं शुरू करने जितने लोग नहीं थे, तब हमारे पास सबूत थे। स्रोत से प्रामाणिक डेटा 'सांख्यिकीय परदे' को हटाने के लिए एक शक्तिशाली साधन रहा है जिनका सामना अनौपचारिक महिला श्रमिक के सभी स्तरों स्थानीय, जिला, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और वैश्विक पर करते हैं। जैसा कि हमारे सभी सत्याग्रहों - 'माथोडा कामदार', माणेक चौक के फुटपाथ विक्रेता, खेड़ा तंबाकू श्रमिक या विज्ञान भवन के बाहर आईएलसी तक पहुंच प्राप्त करने - में वर्णित है जमीनी स्तर के सबूतों ने हमें अन्याय से लड़ने के लिए जमीनी वास्तविकताओं को समझने और उचित रणनीतियों का विकास करने में मदद की है।

दूसरा, हमने हमेशा हमारे सदस्यों, उनकी मांगों और जरूरतों को सुना है। वे कार्यवाही के लिए हमारी मार्गदर्शक हैं। हमने इन वर्षों में हमने अपने सदस्यों से सीखने के लिए कई मंचों और अवसरों को सृजित किया है और उनकी मांगों और जरूरतों के अनुसार योजनाएं, कार्यक्रमों और अभियानों का विकास किया है। महिलाओं को संगठित करने के लिए हमारे दृष्टिकोण का एक प्रमुख पहलू स्थानीय, जमीनी स्तर के श्रमिकों के नेतृत्व को विकसित करना है। सेवा के काम के सबसे संतोषजनक पहलुओं में से एक यह देखना है कि कैसे हजारों महिलाओं को अपने गांवों और इलाकों के सक्षम, समावेशी और

साहसी नेताओं के रूप में विकसित किया जाए। उनमें से बहुत सी अपने पंचायत, ग्राम स्वास्थ्य स्वच्छता और पोषण समितियों (वीएचएसएनसी), महिला स्वास्थ्य समिति (एमएएस) और स्कूल प्रबंधन समितियों (एसएमसी) के लिए चुनी गई हैं।

पिछले एक दशक से, अब 'सेवा' की कार्यकारी समिति में कामगार वर्ग की निर्वाचित महिलाएं शामिल हैं, जो भारत में अनौपचारिक श्रमिकों के अपने आंदोलन का नेतृत्व कर रही हैं। सेवा की महासचिव ज्योति मेकवान, तंबाकू श्रमिक - इंदिराबेन की बेटी हैं, जिन्होंने पहले खेड़ा जिले में महिलाओं को संगठित किया, फिर सत्याग्रह का नेतृत्व किया था। इसी तरह, सेवा द्वारा गठित 100 से ज्यादा सहकारी समितियां महिला श्रमिकों के निर्वाचित बोर्डों के नेतृत्व में काम कर रही हैं। इन सहकारी समितियों में, महिलाएं अपने ही सामूहिक उद्यमों की उपयोगकर्ता, प्रबंधक और मालिक हैं।

तीसरा, हमने हमेशा महिलाओं को अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने के अलावा स्वास्थ्य देखभाल, बाल देखभाल, शिक्षा, पानी और स्वच्छता और वित्तीय सेवाओं जैसे रचनात्मक कार्य करने के लिए संगठित किया है। गांधीजी ने अपने कार्यकर्ताओं और आश्रम के साथी निवासियों से इस तरह के रचनात्मक कार्य का प्रयोग करने और विकसित करने के लिए आग्रह किया था।

संघटन के हमारे दैनिक अनुभवों के माध्यम से, हमने इसके महत्व का भी एहसास किया है। हम संघों और सहकारी समितियों के माध्यम से संघर्ष और विकास की प्रभावी रणनीति पर आ गए। यह संयुक्त या 'दोहरी' रणनीति अनौपचारिक महिला सहकारी समितियों के संगठन में बहुत प्रभावी साबित हुई है। एक तरफ, बड़ी संख्या में महिलाओं को हमारे संघ में संगठित किया जाता है जो उन्हें सामूहिक ताकत, सौदेबाजी की शक्ति, आवाज और प्रतिनिधित्व देता है, और दूसरी तरफ, उनके सामूहिक उद्यमों - सहकारिता - के रोजी रोटी के वैकल्पिक स्रोत प्रदान करते हैं।

इसके अलावा, सहकारी समितियों में, महिलाएं अपने स्वयं के उद्यमों की उपयोगकर्ता, मालिक और प्रबंधक हैं - वे अब अपनी आजीविका के लिए या रोजगार के लिए दूसरों पर निर्भर नहीं रहती। सहकारिता न केवल जमीनी स्तर पर काम और आजीविका पैदा करती हैं, बल्कि लोकतंत्र की प्रयोगशालाएं, नेतृत्व और सामूहिक और नैतिक तरीके से व्यवसायों के प्रबंधन के नए और रचनात्मक तरीके भी हैं।

चौथा, महिला श्रमिकों को संगठित करने और सामाजिक सुरक्षा और वित्तीय सेवाओं के साथ वैकल्पिक आजीविका विकसित करने के लिए हमारे एकीकृत और समग्र दृष्टिकोण से स्व-सहायता और आत्मनिर्भरता के लिए रचनात्मक और समग्र कार्रवाई की गांधीवादी परंपरा भी प्रतिध्वनित होती है। वास्तव में, इन वर्षों में हमने देखा है कि आत्मनिर्भरता के लिए एक-साथ 'चार स्तंभों' की आवश्यकता है:

1. महिलाओं के नाम में पूंजीकरण और परिसंपत्ति निर्माण
2. सामाजिक सुरक्षा जिसका अर्थ है कम से कम स्वास्थ्य देखभाल, बाल देखभाल, बीमा, पेंशन, पानी और स्वच्छता के साथ आवास
3. नेतृत्व और सदस्यता-आधारित संगठनों के प्रबंधन के लिए क्षमता निर्माण
4. नीतिगत स्तर पर आवाज उठाना और प्रतिनिधित्व।

इन सभी स्तंभों को विकेन्द्रीकृत तरीके से उपलब्ध कराई गई सेवाओं के साथ स्थानीय रूप से बनाया जाना चाहिए। वास्तव में, सभी सेवाएं और गतिविधियां सहकारी समितियों और एसएचजी और उनके संगठनों के माध्यम से जिला स्तर पर की जाती हैं।

अंत में, न केवल सभी कार्य स्थानीय लोगों - हमारे मामले में महिलाओं - के नियंत्रण में है, बल्कि वित्त नियंत्रण और योगदान भी महिलाओं द्वारा ही किया जाता है। चंपारण में, गांधीजी यह सावधानी बरतते थे कि नील किसानों के संघर्ष के लिए कोई बाहरी निधि नहीं लाई जाए।

इसी तरह, उनके द्वारा शुरू किए गए कई अन्य संघर्षों और आंदोलनों में उन्होंने जोर देकर कहा कि लोग नकदी और किसी चीज के रूप में योगदान करके स्वयं शुरू करें। उन्होंने आंदोलनों और सभी

रचनात्मक कार्यों की दीर्घकालिक स्थिरता में गहरा विश्वास किया। 'सेवा' में हमने इन सीखों को दिल में बिठा लिया है। हमारे सभी सदस्यता-आधारित संगठन जैसे हमारी यूनियन, सेवा बैंक और सेवा बीमा या वीमोसेवा, आदि, वित्तीय रूप से टिकाऊ हैं और बोर्डों या कार्यकारी समितियों के लिए निर्वाचित महिलाओं द्वारा चलाए जा रहे हैं। 'सेवा' आंदोलन के अन्य संगठन, हमारे बाल देखभाल सहकारी या किसानों की सहकारी समितियां स्थायित्व के मार्ग पर हैं, यद्यपि उनके रास्ते में कई चुनौती और संघर्ष हैं। इन सबमें विकेंद्रीकृत नियंत्रण, स्वायत्त लेकिन उत्तरदायी कार्य और सामूहिक नेतृत्व, विशेष रूप से श्रमिक वर्ग के महिला नेतृत्व के सिद्धांतों को शामिल करते हैं।

'सेवा' के मूल्य और सिद्धांत हमारे स्वतंत्रता आंदोलन और इसके बाद के वर्षों के संघटन पर निर्मित हैं। हम गांधीजी और चंपारण सत्याग्रह की भावना और मूल्यों को बनाए रखने का प्रयास करते हैं, क्योंकि हम बिहार, जहां नील किसानों ने पहले अन्याय और शोषण के खिलाफ आवाज उठाई थी सहित पूरे भारत में महिलाओं को संगठित करते हैं। ये मूल्य और सिद्धांत 'स्वराज' के गांधीजी के विचार को आगे बढ़ाने का भी प्रयास करते हैं। वास्तव में, सेवा आंदोलन 'दूसरी आजादी' के बड़े लक्ष्य, गरीबी और भूख से स्वतंत्रता और स्थानीय महिलाओं और परिवारों को 'स्वराज' के लिए संगठित करने के लिए प्रतिबद्ध है। जब हम चंपारण सत्याग्रह पर नज़र डालते हैं, तब हम न केवल नील किसानों और उन लोगों - गांधी जी और अन्य - से प्रेरित होते हैं जिन्होंने उन्हें अन्याय और गरीबी से बाहर निकाला था, लेकिन हम यह भी देखते हैं कि यह स्थानीय लोगों की अगुवाई में जमीनी स्तर पर होने वाले संघटन और परंपरा के इतिहास, और एक स्थायी, पारदर्शी और विकेन्द्रीकृत तरीके से इस पर विचार करने का अवसर है। ■

साक्ष्यों की प्रासंगिकता को समझनाः

चंपारण में नील किसानों की हालत के बारे में गांधीजी के अध्ययन से सीख

- बिनोय आचार्य ('उन्नति' के स्थापक व निदेशक)

'गांधी और चंपारण सत्याग्रहः एक प्रयास, एक विरासत और समकालीन भारत' पर 'इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडी', शिमला में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत, 29-31 मई , 2017

यह देखा गया है कि साक्ष्य, प्रस्तुतियों, हलफनामों, बयानों को इकट्ठा करने और उपयोग करने एवं शिकायतों के पंजीकरण के समुदाय सशक्तिकरण, और उन अधिकारों और हकों का दावा करने और प्राप्त करने के मामले में आकर्षक परिणाम रहे हैं, जिन्हें कई वर्षों और कभी-कभी पीढ़ियों से वंचित किया जाता रहा है। दार्शनिक और कार्य पद्धति के स्तर पर ज्ञान निर्मित करने की नींव तैयार करने में इसकी शक्ति के संबंध में साक्ष्य के अध्ययन किये गए हैं। हालांकि, अनुभवजन्य शोध ज्यादातर 'प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य', 'पुरालेखित गवाही' या 'आत्मकथात्मक गवाही' पर आधारित होता है। अधिकारों और हकों को नकारने से पीड़ित की प्रामाणिक और निडर गवाही की संग्रह विधियों और मुद्दों को समझने और मुद्दों के निवारण के लिए इसकी प्रासंगिकता पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया है। गरीब, वंचित और शोषित के पक्ष में वैध अधिकार हासिल करने के लिए साक्ष्यों का समय-समय पर उपयोग किया गया है। दलित अधिकारों के उल्लंघन के लिए मांगे जाने वाले न्याय के मामले में, सूचना की जानकारी के लिए मजदूर किसान शक्ति संघटन का काम, निर्भया मामले के बाद लिंग आधारित हिंसा का अध्ययन करने के लिए गठित न्यायमूर्ति वर्मा समिति और कानून की सिफारिश, गुजरात दंगा पीड़ितों के लिए क्षतिपूर्ति की मांग और जन विकास द्वारा कानूनी कार्य - सामाजिक न्याय केंद्र और गुजरात में मनरेगा के राज्यव्यापी सामाजिक ऑडिट की मांग के लिए लेखक ने पूरी तरह से जुड़कर कार्य किया है और साक्ष्य की शक्ति को गहनता से देखा है और अनुभव किया है।

यहां साक्ष्यों की शक्ति और साक्ष्यों की पद्धति को समझने का, विशेष रूप से ऐतिहासिक चंपारण सत्याग्रह से सबक सीखने का प्रयास किया गया है। गांधीजी भारत के लिए नये थे, उन्होंने 48 वर्ष की आयु में चंपारण में नील किसानों की स्थितियों के सीधे व्यक्तिगत बयानों और प्रस्तुतियों का अध्ययन किया था। इससे किसानों का शोषण और शिकायतों का स्पष्ट विवरण परिलक्षित हुआ। सवाल यह है कि इतने सारे किसान निडर होकर कैसे आगे आए और इतने दमन और भय के बावजूद 4000 किसानों ने आगे बढ़कर अपनी गवाही दी। साबरमती आश्रम में उपलब्ध साक्ष्य और लगभग 400 साक्ष्यों के वर्तमान प्रतिलेखन दर्शाते हैं कि छोटी-बड़ी जोत वाले सभी किसानों, दलित और मुस्लिम किसानों सहित सभी जाति समूहों को इस प्रक्रिया में शामिल किया गया था। एक गवाही ऐसी थी जिसमें एक गांव के अकेले किसान का कहना था कि जब तक अन्य किसान आगे नहीं आते, तब तक वह गवाही नहीं दे पाएगा। किसानों की व्यापक श्रेणी से इन मिलावट रहित साक्ष्यों के आयोजन और एकत्र करने की विधि में कुछ खास था।

हाल के वर्षों में, कानूनों की मांग और लागू करने के लिए साक्ष्यों के संग्रह और व्यवस्थित रूप से आवाज उठाने के कई सफल उपयोग सामने आए हैं। सूचना का अधिकार 'एमकेएसएस' द्वारा कई जन सुनवाई करने के बाद आया, जिसमें गरीब लोगों की गवाही सामने लाई गई, जिसमें उनके उचित हकों को नकारा गया था या कम मजदूरी का भुगतान किया गया था या खराब गुणवत्ता वाला ग्रामीण बुनियादी ढांचा रहा था। 'एमकेएसएस'ने अस्तित्वहीन सार्वजनिक कार्यों (रिकॉर्ड में पैसा खर्च किया जाता है, लेकिन वास्तविक काम नहीं होता) के लिए जाली भुगतान, ताकतवर अयोग्य व्यक्तियों को आवास देना जैसी कल्याणकारी योजनाओं आदि पर साक्ष्य एकत्रित किए और उन्हें मीडिया, सरकारी अधिकारियों, नागरिक समाज के नेताओं और आम लोगों के ध्यान में लाने, भ्रष्टाचार को उजागर करने और कानूनी कार्रवाई के लिए अधिकारियों को संवेदनशील बनाने के लिए और प्रेरित करने का काम किया। उन्होंने स्थानीय लोक गीतों, कठपुतली शो, नुक्कड़ नाटक और नारों के विभिन्न रूपों

का इस्तेमाल किया। सबसे लोकप्रिय यह है कि 'मैंने कोई भी सांसारिक चीज नहीं मांगी, मैंने जो मांगा वह है बिल वाउचर, पूरा वेतन, शिक्षकों की उपस्थिति, अस्पताल में दवा आदि'। इन संचार विधियों ने सूचना के अधिकार पर आम लोगों की कल्पना पर कब्जा कर लिया। युवतियां, बूढ़े और विधवाएं बड़ी संख्या में साक्ष्य देने के लिए आगे आए। आज, स्थानीय नेता, शंकर सिंह, जिन्होंने 'एमकेएसएस' के साथ प्रक्रिया शुरू की थी, सूचना प्रकटन कार्यकर्ताओं के सर्कल में एक सम्मानजनक नाम है। स्वयंसेवकों और साक्ष्य देने वाले लोगों को धमकियों और शारीरिक हमले करके विरोध किया जा रहा था। पेंशन के भुगतान की गारंटी, पीडीएस राशन जारी करने और पीएचसी में दवाइयां उपलब्ध कराने के लिए गांव में शुरू की गई प्रक्रिया की परिणति सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 में हुई।

दूसरा उदाहरण जो दिमाग में आता है, वह है दिवंगत न्यायमूर्ति वर्मा समिति की स्थापना जो लिंग आधारित हिंसा का अध्ययन करने और कानून की सिफारिश करने के लिए की गई थी। आम जनता के साथ आयोजित असंख्य कार्यशालाओं और यौन हिंसा के पीड़ितों के बयानों ने उन मुद्दों के बारे में गहरी समझ प्रदान की जो पहले कभी ध्यान में नहीं आए थे। यहां तक कि बुजुर्ग पुरुष आगे आए और उस यौन हिंसा का आरोप लगाया जो उनके साथ तब हुई थी जब वे बच्चे थे। समलैंगिक पुरुषों, महिलाओं और ट्रांसजेंडर समुदाय के मुद्दे सुने गए थे और उनके साक्ष्य सावधानीपूर्वक प्रलेखित किए गए। इस परामर्श से उभरने वाले मुद्दों का समाधान करने के लिए सिफारिशें की गई। युवा वकीलों की एक प्रशिक्षित टीम ने समर्पण और सावधानी के साथ प्रलेखन किया। लिंग-आधार पर होने वाली हिंसा को एक नया आयाम मिला और आखिर में आपराधिक प्रक्रिया संहिता (सीआरपीसी) को बदला गया, जिसमें एसिड हमले, ताक-झांक, पीछा करना और बलात्कार से यौन उत्पीड़न के मुद्दे शामिल किए गए। आम लोगों ने इस प्रक्रिया में भाग लिया क्योंकि उन्हें विश्वास था कि समिति यौन हिंसा के विभिन्न रूपों को पहचानने में और लिंग-आधारित हिंसा पर न्याय प्रक्रिया में महत्वपूर्ण परिवर्तन करेगी।

'एमजीनरेगा' की सामाजिक ऑडिट, हालांकि सरकार द्वारा गांवों में शुरू की गई कार्यवाही है लेकिन इसने आम श्रमिकों को अनियमितताओं के खिलाफ अपनी आवाज उठाने के लिए प्रेरित किया है। पीड़ितों के साक्ष्यों ने कानूनी तौर पर मामलों को मजबूत किया है, समुदाय स्तर पर सशक्त कर रहे हैं और अधिकारियों की नज़र में मामले की प्रामाणिकता को मजबूत किया है। वास्तविकता को समझने और कानूनी ढांचे के प्रति निदान और घोषणाओं के लिए प्रस्तुत करने हेतु साक्ष्यों की संभावित ताकत को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। एक उदाहरण इस प्रकार है, एक महिला ने टेलीफोन हेल्पलाइन से कहा कि उसके गांव में एक मशीन का इस्तेमाल अवैध रूप से मनरेगा के लिए किया जा रहा है। यह जानकर, ग्रामीण विकास विभाग के सचिव ने इस मामले की जांच के लिए जिला प्रशासन से कहा। अधिकारी महिला के घर गए और साइट पर जाने के बजाय अपनी बात साबित करने के लिए तरह-तरह के प्रश्न पूछे। अधिकारियों ने बताया कि इस मामले में महिला को कुछ नहीं कहना है। सचिव ने अधिकारियों से पूछा कि आपको शिकायत (फरियाद) की जांच करनी थी या शिकायतकर्ता (फरियादी) से पूछताछ करना था। संदेश अच्छी तरह से संप्रेषित हो गया था। यह एकल संदेश सामाजिक ऑडिट और बयान लेने के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत बन गया।

गुजरात दंगों के तुरंत बाद, एक स्थानीय मानवाधिकार संगठन, जन विकास और सामाजिक न्याय केंद्र ने यह अनुमान कर लिया था कि प्रभावित और आंतरिक रूप से विस्थापित लोगों (आईडीपी) को मुआवजा प्राप्त करने में कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है और कुछ को उनके मामले दर्ज करने में भी कठिनाई का सामना करना होगा। इस संगठन को एनएचआरसी से समर्थन प्राप्त है जो साक्ष्य एकत्र करने के कार्य में शामिल होने को वैधता प्रदान करता है। स्टैंप पेपर में शपथ पत्रों के प्रारूप में गवाही के साथ साक्ष्य लिया जाता है। उन्होंने विभिन्न जिलों से 10,000 से अधिक मामले एकत्र किए। नुकसान और क्षति की गंभीरता प्रमाणित करने के लिए उनका तर्क साक्ष्य वाले मामलों की संख्या और गुणवत्ता थी। प्रारंभ में, सईदा हामिद और उच्च न्यायालय के सेवानिवृत न्यायाधीशों जैसे प्रतिष्ठित लोगों ने साक्ष्य इकट्ठा किए। इसने प्रक्रिया की विश्वसनीयता और बढ़ा दी। इसके बाद, प्रशिक्षित वकीलों और पैरा कानूनी पेशेवरों के एक समूह ने एक अभियान की भावना से प्रलेखन कार्य किया। प्रामाणिकता स्थापित करने के लिए गवाही संग्रह के दौरान, स्वयंसेवकों ने अपने फ़ोन कैमरे में होने वाले नुकसान के फोटो ले लिए और वॉट्सऐप के माध्यम से भेज दिये। बहुत से लोग पोस्ट द्वारा भी अपनी गवाही भेजते हैं। गलत सूचनाओं वाली कोई भी गवाही पंजीकृत नहीं हुई थी। यह स्थानीय नेताओं के माध्यम से समुदाय को स्पष्ट किया गया था। गंभीर प्रकृति के मामलों और बलात्कार, गंभीर

चोट या हत्या जैसे मानवाधिकारों के घोर उल्लंघन के मामलों को वरिष्ठ व्यक्तियों को भेजा गया क्योंकि उनमें बहुत विस्तृत तथ्य खोजने की जरूरत होती है।

यह बताया गया था कि बड़ी संख्या में साक्ष्यों के कारण नुकसान और क्षति की सीमा प्रमाणित की जा सकी और सरकार पर उचित मुआवजे के लिए दबाव डाला गया था। कई गंभीर मामलों के लिए प्राथमिकी दर्ज की गई थी। न्याय निवारण व्यवस्था अभी पूरी नहीं हुई थी। सुप्रीम कोर्ट ने शपथ पत्रों का संज्ञान लिया। विधेयक की मसौदा समिति के एक सदस्य और शपथ पत्रों के संग्रह के मुख्य वास्तुकार गगन सेठी कहते हैं, कि इन साक्ष्यों ने सांप्रदायिक संघर्ष के कई अलग-अलग आयाम दिए जिन्होंने सांप्रदायिक हिंसा विधेयक का मसौदे तैयार करने में मदद की। यह एक अलग बात है कि संसदीय स्थायी समिति में विधेयक को मंजूरी नहीं दी गई थी।

एक सदी पहले, गांधीजी और उनकी स्वयंसेवकों की टीम ने नील किसानों के मन में उम्मीदें जगाने के लिए रिकॉर्डिंग प्रमाणों का उपयोग करके एक आंदोलन खड़ा किया था। किसान अपनी शारीरिक, सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक स्थितियों को बिना किसी बाधा में साझा करने में सक्षम महसूस करने लगे। यह स्थानीय नेतृत्व के महत्व पर भी जोर देती है - चंपारण के मामले में ये राजकुमार शुक्ला थे। इस कार्य में ब्रजकिशोर प्रसाद, राजेंद्र प्रसाद, आचार्य कृपलानी, महादेव देसाई, बी. धरणीधर, बी. रामनवमी जैसे व्यक्तियों द्वारा सहायता की गई जिन्होंने भोजपुरी बोलने वाले किसानों के ब्योरे का दस्तावेजीकरण और अनुवाद किया। समग्र उद्देश्य स्थानीय स्थिति के बारे में जानना था। यह पट्टेदारों की स्थिति के बारे में एक स्वतंत्र तथ्य-जांच है। अंत में, परिणाम इतना शक्तिशाली था कि बिहार और उड़ीसा के लेफ्टिनेंट गवर्नर, ई.ए. गेट और मुख्य सचिव, एच. मैकफेर्सन को गांधीजी के साथ बैठकें करने को मजबूर होना पड़ा।

चंपारण के सत्याग्रह में बाबू राजेन्द्र प्रसाद, नाडिया और बेस्सोर में नील किसानों के मुद्दों का निवारण करने के लिए 1860 में कलकत्ता में स्थापित आयोग के बारे में एक विवरण देते हैं। वे कहते हैं कि प्रबुद्ध भद्रलोक और हरीश चंद्र मुखर्जी जैसे लोगों की पहल ने आयोग के समक्ष पेश होने के लिए नील किसानों/पट्टेदारों को कलकत्ता भेजने की व्यवस्था की। किसानों के लिए बंगाली बुद्धिजीवियों का काफी समर्थन था। दीनबंधु मित्रा के बंगाली नाटक नील दर्पण ने पट्टेदारों की शोषक स्थितियों को चित्रित किया। सरकार ने इस नाटक पर प्रतिबंध लगा दिया और मित्रा को कैद कर दिया और उन पर 2000 रु. का जुर्माना लगाया। मिशनरियों ने कहा कि 'नील की एक भी पेटी मानव रक्त का दाग लगे बिना इंग्लैंड नहीं पहुंची'। इस कथन ने सरकारी हलकों में पर्याप्त घृणा पैदा की। यहां यह भी उल्लेख किया जाना चाहिए कि कई ब्रिटिश अधिकारी पट्टेदारों के साथ सहानुभूति रखते हैं। कुछ महत्वपूर्ण नाम हैं श्री विलियम हर्शेल थे जिन्हें बाद में 'सर' की उपाधि से सम्मानित किया गया था और श्री एशले ईडन जो बंगाल के लेफ्टिनेंट गवर्नर बन गए थे। अंत में, सर जॉन पीटर ग्रांट, बंगाल के तत्कालीन लेफ्टिनेंट गवर्नर ने आयोग की सिफारिशों को लगभग पूरी तरह से स्वीकार कर लिया।

यह 1860 के बंगाल आयोग के बयान से स्पष्ट है कि बुद्धिजीवियों और प्रबुद्ध अधिकारियों के बीच पट्टेदारों के कार्यों के लिए व्यापक समर्थन था। सरकार की तरफ से दबाव अवमानना, प्रतिवादी, प्रतिशोधात्मक और घिनौना था। 1917 तक स्थिति नहीं बदली थी। राजेंद्र प्रसाद ने लिखा है कि 'पट्टेदारों की शिकायतों को उठाने के लिए बिहार में कोई हरीश चंद्र मुखर्जी नहीं है, न ही पट्टेदारों में से कोई ऐसा है जो अपने आपको कलकत्ता आयोग के बारे में सूचित रख सके' (पेज 26)। बागान मालिक लगातार कहते रहे कि पट्टेदारों की कोई समस्या नहीं थी। बिहार विधान परिषद में चंपारण कृषि विधेयक पर भाषण में, श्री मौडे ने पट्टेदारों कठिनाइयों के बारे में विस्तार से बताया। बागान मालिक अदालत की स्थापना के लिए सरकार पर दबाव डालते रहे। शुरुआती कुछ मामलों में फैसला पट्टेदारों के खिलाफ गया। 1912 तक, पट्टेदारों ने सरकार के समक्ष नील की खेती के लिए भूमि उपयोग के तीनकाठिया सिस्टम के बारे में याचिकाएं प्रस्तुत करना सीख लिया था जो लाभहीन और शोषक था और जबरदस्त दबाव के साथ किया जाता था। यह अनुमान लगाया गया है कि लगभग 40 प्रकार के अवैध उपकर और शोषक प्रथाएं (अबवाब) हैं जो परंपरा के नाम पर प्रबल और वैध थीं। 6 जुलाई, 1913 को, स्थानीय समाचार पत्र द बिहारी ने एक जोरदार लेख लिखा। इसके बावजूद, जब लॉर्ड हार्डिंग पटना हाईकोर्ट की नींव रखने आए, तब उन्होंने प्लांटर्स को यह कहते हुए सही ठहरा दिया कि प्लांटर्स और उनके रैयत के संबंध उत्तर बिहार जिलों में सौहार्दपूर्ण और संतोषजनक हैं। (पेज 102)

गांधीजी के चंपारण आने से पहले पट्टेदारों के प्रति माहौल पूरी तरह

से शत्रुतापूर्ण था। बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद की विधान परिषद में सरकारी अधिकारियों और गैर-सरकारी अधिकारियों की एक समिति की मांग करने की पहल में, बंदोबस्त अधिकारी की रिपोर्ट को सार्वजनिक करने की मांग की गई। इसे सरकार ने अस्वीकार कर दिया था। कुछ गैर-सरकारी सदस्यों को चंपारण के बारे में कोई जानकारी नहीं थी, उन्होंने प्रसाद को प्रस्ताव वापस लेने को कहा। गांधीजी ने यह यह तय किया कि वे प्लांटर्स एसोसिएशन और सरकार के प्रतिनिधियों से बात करेंगे। गांधी जी भी जानते थे कि उन्हें चंपारण से वापसी के लिए वारंट मिलेगा। यह समझना चाहिए कि इसमें काफी रणनीति और योजना शामिल थी। शायद 17 अप्रैल, 1917 की रात (अदालत में ऐतिहासिक दिन से पहले) गांधीजी सोए नहीं थे। राजेंद्र प्रसाद ने लिखा है कि गांधीजी पट्टेदारों की शिकायतों को दूर करने के लिए दृढ़ संकल्प के साथ जेल जाने के लिए तैयार थे और उनका दमन करने वालों को नुकसान नहीं पहुंचाने के लिए भी दृढ़ संकल्पित थे। (पेज 146-47)। यह कार्यवाही के लिए विश्वसनीयता निर्मित करने की गांधीवादी रणनीति की विशेषता है। राजेंद्र प्रसाद आगे लिखते हैं कि गांधीजी के आगमन के बाद चंपारण में 'स्वतंत्रता और निर्भयता की अजीब भावना पट्टेदारों में दिखाई दे रही थी' (पेज 255)। यह निर्भयता एक अस्थायी घटना थी या परिवर्तनकारी कहना मुश्किल है। हिंदुस्तान टाइम्स (17 अप्रैल, 2017) के एक साक्षात्कार में प्रो. मृदुला मुखर्जी ने कहा कि 'लोग कहते हैं कि गांधीजी करिश्माई थे, यही वजह है कि वे लाखों लोगों को जुटाने में सक्षम थे। लेकिन सच्चाई यह है कि वे असाधारण क्षेत्रीय काम के कारण जमीनी लोगों को समझ गये थे उनसे हर दिन मिलने वाले लोगों की संख्या पर गौर करें... '।

शायद गांधीजी और उनके समर्थकों के समूह द्वारा एकत्रित नील किसानों की गवाही और इसके बाद अन्य ऐसी गतिविधियों द्वारा से पद्धति संबंधी सबक सीखने की आवश्यकता है। समकालीन स्थिति में सामाजिक विज्ञान अनुसंधान और पैरवी में यह महत्वपूर्ण योगदान है।

इससे कुछ प्रणालीगत मुद्दे उभरे जो इस प्रकार हैं:

1. अपने नागरिक अधिकारों का उल्लंघन, शोषण और अमानवीय उपचार से पीड़ित लोगों की गवाही लेना न केवल उनके आस-पास की वास्तविकता की जटिलता को समझने के लिए एक ठोस विधि है बल्कि पीड़ितों को अपनी समझदारी, विश्लेषण और संगठन के लिए आवाज देने की बाध्यकारी प्रक्रिया भी है। यह किसी भी व्याख्या के बिना प्रभावित लोगों के परिप्रेक्ष्य को समझने की प्रक्रिया है। इसे पाउलो फ्रैरियन प्रतिज्ञान कहा जा सकता है।
2. अनुसंधान दल और प्रतिभागियों/समुदायों के प्रभावित समूह के बीच साक्ष्य के उपयोग पर उद्देश्य की स्पष्टता इस मुद्दे पर सीधी कार्यवाही के द्वारा निवारण के लिए प्रेरणा प्रदान करती है। यह प्रभावित लोगों को एक स्पष्ट समझ देता है कि कई लोग इन समस्याओं का सामना कर रहे हैं। यह एक पूर्ण कार्य - मुद्दे के तथ्य-खोज से लेकर इसके अंतिम निवारण के लिए होना चाहिए।
3. यह स्पष्ट है कि साक्ष्यों को इकट्ठा करना कड़ी मेहनत वाला क्षेत्र कार्य है। यह उद्देश्य के साथ सीधी कार्यवाही को बढ़ावा देता है। गांधीजी की अपेक्षा थी कि साक्ष्यों के संग्रह के साथ, स्वयंसेवकों को गांव को साफ करना चाहिए और सड़कों की मरम्मत करना या स्वच्छता सेवाओं में सुधार करना चाहिए। उन्होंने कहा था... 'स्वयंसेवकों को सयाना, भरोसेमंद और मेहनती होना चाहिए जो फावड़ा उठाकर गांव की सड़कों को बनाने मरम्मत करने और और गांव के सैस पूल की सफाई करने में नहीं हिचके और अपने जमींदारों के साथ व्यवहार करते समय रैयत को सही दिशा दें' (पेज 569)। गांधीजी कहते थे कि 'इस तरह की सेवा के लिए वे ही फिट थे, जिन्होंने सत्य को स्वीकार किया था, डर छोड़ दिया और गरीबी को अपनाया है' (पेज 264)।
4. एक उम्मीद की भावना जगती है कि स्थिति बदलेगी और आशा देती है कि अपराधियों के अमानवीय कृत्यों की प्रक्रिया - चंपारण कृषि अधिनियम के रूप में दोनों - अल्पकालिक और दीर्घकालिक बंद हो जाएगी या समाप्त हो जाएगी। गांधी जी का कहना था कि 'जब हम इन लोगों के प्रारब्ध में सुधार करेंगे तभी हम स्वराज प्राप्त कर सकते हैं'।
5. इस प्रक्रिया में लगे एजेंसी/समूह - आयोग, प्राधिकरण या एजेंसी जो इन भारी-भरकम सूचनाओं को स्वीकार, जांच और निवारण करेंगे उसकी निष्पक्षता पर विश्वास करने की आवश्यकता है। गांधीजी को पूर्ण विश्वास है कि सत्ता में बैठे लोगों के नैतिक प्राधिकारों को सच्चाई के आधार पर लागू किया जा सकता है।
6. जो समूह कष्ट दे रहा है और अधिकारों को नकार रहा है उसके बारे में प्राधिकारियों के साथ 'पट्टेदारों की शिकायतों को दूर

करने के लिए तैयार और समर्पित', और उन पर अत्याचार करने वालों को कोई नुकसान नहीं पहुंचाने के लिए समान रूप से समर्पित' की भावना के साथ खुली बातचीत के लिए तैयार थे। गांधीजी प्राधिकारियों पर कोई भी जबरदस्ती नहीं कर रहे थे, बल्कि उन्होंने 'सत्याग्रह' का इस्तेमाल प्राधिकारियों को मनाने के लिए किया था। उन्होंने प्राधिकारियों के साथ बातचीत में असाधारण विनम्रता दिखायी।

7. लोगों को न्याय मांगने की प्रक्रिया में - अपनी कहानी, अपनी आवाज और अपनी एकता से ताकत प्राप्त करना चाहिए।
8. प्रतिभागियों में निडर तरीके से भाग लेने की क्षमता का विकास करना चंपारण से प्राप्त सबसे महत्वपूर्ण सीख है। राजेन्द्र प्रसाद ने कहा है कि '... महात्मा गांधी के आगमन से चंपारण के पट्टेदारों में स्वतंत्रता और निडरता का एक विशिष्ट भाव दिखाई दे रहा था'। 17 अप्रैल, 1917 को शुरू में पट्टेदारों ने सावधानी के साथ अपनी गवाही दी, क्योंकि अधिकारी देख रहे थे और रिकॉर्डिंग करते थे, हालांकि कुछ समय बाद पट्टेदारों ने खुलकर बात की थी (पेज 143)।
9. साक्ष्यों के संग्रह में सूचित सहमति का वातावरण बनाना, बिना किसी धोखे के, निजता और गोपनीयता बनाए रखना, महत्वपूर्ण कारक हैं।
10. ऊंचे दर्जे की सटीकता के साथ व्यक्ति द्वारा सीधे प्रलेखित साक्ष्यों की संख्या और गुणवत्ता जिस पर पीड़ित द्वारा हस्ताक्षर किया गया हो, उसको खतरे के समय हलफनामे का दर्जा दिया जाता है।

साक्ष्य की शक्ति तब भी देखी जा सकती है जब डॉ. अम्बेडकर को भारत में संवैधानिक सुधारों पर चर्चा के लिए द्वितीय गोलमेज सम्मेलनों में दलितों के वैध प्रतिनिधित्व के बारे में सवाल उठाया गया था। इस सम्मेलन के दौरान (सितंबर-दिसंबर 1931), गांधीजी का मानना था कि कांग्रेस भारत के सभी सामाजिक समूहों का प्रतिनिधित्व कर रही है। डॉ. अम्बेडकर ने दलितों की दुर्दशा के साक्ष्य पेश किए और दलितों के साथ भेदभाव के मुद्दे उठाने की अपील की। संवैधानिक निकायों (मुस्लिमों के लिए सांप्रदायिक पंचाट के अनुरूप) में दलितों के अलग प्रतिनिधित्व के लिए डॉ. अम्बेडकर की मांग स्वीकार कर ली गई। हालांकि, गांधीजी ने विरोध किया और उनके अनिश्चितकालीन उपवास के बाद, डॉ. अम्बेडकर आरक्षण के लिए सहमत हुए और अलग प्रतिनिधित्व की मांग वापस ले ली (पूना पैक्ट, 1932)।

हाल के वर्षों में आईटी वाले अनुप्रयोगों के माध्यम से दृष्टिकोण के संग्रह पर जोर है। स्मार्ट सिटी परियोजनाओं के चयन में, सार्वजनिक भागीदारी को काफी महत्व दिया जाता है। यह देखा गया कि अधिकांश नगरों ने भाग लेने के लिए आईटी वाले तंत्रों का इस्तेमाल किया। शिकायत पंजीकरण के लिए केंद्र और राज्य सरकारों ने आईटी पोर्टल्स बनाए हैं (शिकायत निवारण के लिए pgportal एक व्यापक तंत्र है)। ये तंत्र उपयोगी और प्रभावी हैं। लेकिन, यह इस मुद्दे पर एक सामूहिक चेतना और एकता लाने में विफल रहता है जो साक्ष्य संग्रह प्रदान करता है। हम साक्षियों के संग्रह का बहुत अधिक दुरुपयोग भी करते हैं, मुख्य रूप से शोधकर्ता के बिंदु को साबित करने या किसी परियोजना के इच्छित परिणाम स्थापित करने के लिए। एक परियोजना मूल्यांकन के प्रस्तुतीकरण में, रिपोर्ट ने ग्राफिक रूप से आधार रेखा के मुकाबले परियोजना परिणाम दिखाये थे। इसे एक समग्र सफलता के रूप में दिखाया गया था। हालांकि, जब गांव की महिलाओं को परियोजना के अपने अनुभव को बताने के लिए कहा गया था, तो उन्होंने प्रस्तुति में ग्राफ़ को इंगित करते हुए कहा कि हमें पता ही नहीं था कि हमारे झंडे इतने ऊंचे उड़ रहे हैं। कई अन्य प्रक्रियाएं हो सकती हैं जो साक्ष्य के महत्व और शक्ति को शिथिल करने में योगदान दे रही हैं।

अधिकारों और हकों की रक्षा के लिए और परिवर्तनकारी संवैधानिक बदलाव के लिए साक्ष्य का उपयोग करने के कई विविध तरीके हैं। इतिहास में कई सामाजिक आंदोलनों ने आय प्रतिबंधों के बिना मताधिकार पर 19वीं शताब्दी ब्रिटेन के 'चार्टिस्ट' जैसे विधायी परिवर्तन/सुधारों के लिए साधन के रूप में साक्ष्यों का उपयोग किया है। 'चार्टवाद' शब्द एक चार्टर से लिया गया था जो लाखों साक्ष्यों पर आधारित था। प्रश्न यह है कि साक्ष्यों को जुटाने की और उपयोग की शक्ति को कैसे सुरक्षित किया जाए, जो वैध अधिकारों की मांग करने और परिवर्तनकारी बदलावों को करने वाले मातहत लोगों के हाथों में एक साधन है। यह समझना चाहिए कि साक्ष्य संग्रह एक शोध पद्धति है। हजारों साक्ष्यों पर स्थापित चंपारण सत्याग्रह शायद हमें शताब्दी वर्ष में एक प्रमुख शोध विषय के रूप में साक्ष्यों को इकट्ठा करने के तरीकों को शामिल करने के लिए प्रेरणा और दिशा-निर्देश देता है। ■

तीन तलाक पर फैसला मुस्लिम महिलाओं की वास्तविक दुर्दशा दूर करने में विफलः इंदिरा जयसिंह

'तीन तलाक' के बारे में '**इंदिरा जयसिंह**' से हुए साक्षात्कार के अंश बेतवा शर्मा, राजनीति संपादक द्वारा दिनांक 5.8.2017 के रोज 'हफ़पोस्ट इंडिया' वेबसाइट पर अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित किया गया था, जिसका हिन्दी अनुवाद यहां दिया गया है। इंदिरा जयसिंह सुप्रीम कोर्ट की वरिष्ठ वकील और भूतपूर्व एडिशनल सोलिसिटर जनरल हैं और वे मानव अधिकार के लिए काम करती हैं। स्रोतः http://www.huffingtonpost.in

तीन तलाक को असंवैधानिक बनाने वाला सुप्रीम कोर्ट का फैसला, स्वतंत्र भारत के सबसे महत्वपूर्ण कानूनी फैसलों में से एक है। पांच मुस्लिम महिलाओं ने इस्लाम में तीन बार तलाक बोल देने से, और कभी-कभी एसएमएस, व्हाट्सएप, या स्काइप से तलाक देने की प्रथा को चुनौती दी थी, और रूढ़िवादी मुस्लिमों के खिलाफ जीत हासिल की थी। यह फैसला ऐतिहासिक होने के साथ ही मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के अधिकारों को सीमित करने के लिए एक मील का पत्थर है। क्योंकि आज तक, देश की अदालतों या कानून निर्माताओं ने उनके भेदभाव को चुनौती का लिए साहस नहीं किया था। इसलिए, यह निर्णय कुछ निराशाजनक भी है।

तीन तलाक की प्रथा को असंवैधानिक ठहराने के बावजूद, सुनवाई करने वाले पांच न्यायाधीशों ने रूढ़िवादी धार्मिक परंपरा के खिलाफ जाकर व्यक्तिगत स्वतंत्रता और लैंगिक समानता को प्रोत्साहित करने को टाला था।

एक ओर, न्यायमूर्ति रोहिन्टन नरीमन ने यह कहा था कि तीन तलाक भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत समानता के अधिकारों का उल्लंघन करती है। न्यायाधीश का यह दृष्टिकोण बहुत महत्वपूर्ण है। इसका मतलब है कि हम अब मौलिक अधिकारों के खिलाफ अन्य असमानता की ओर अग्रसर निजी कानून को चुनौती दे सकते हैं।

दूसरी ओर, तीन तलाक के कारण महिलाओं द्वारा सहन की जाने वाली यातनाओं से संबंधित इस फैसले में लैंगिक न्याय की झलक शायद ही दिखाई पड़ती है। हां, न्यायमूर्ति नरीमन ने तीन तलाक को 'स्पष्ट रूप से मनमाना' कहा था। क्योंकि, मुस्लिम पुरुष 'सनक में आकर' विवाह विच्छेद कर सकते थे।

लैंगिक समानता के मामले में न्यायमूर्ति ए.एस. खेहर और न्यायमूर्ति अब्दुल नजीर के बीच मतभेद था, जिसके अनुसार, तीन तलाक मूलभूत अधिकारों का उल्लंघन नहीं करती है और संविधान का अनुच्छेद 25 (1) मुस्लिम व्यक्तिगत कानून की धार्मिक स्वतंत्रता की सुरक्षा करता है। केवल संसद ही स्वास्थ्य, नैतिकता और सार्वजनिक व्यवस्था की रक्षा के लिए व्यक्तिगत कानून में बदलाव कर सकती है। सुप्रीम कोर्ट में इस मामले की दलील करने वाली एकमात्र महिला वकील और पूर्व अपर सॉलिसिटर जनरल, इंदिरा जयसिंह ने मुख्य न्यायाधीश खेहर के फैसले को 'पूरी तरह से और बुरी तरह से प्रतिगामी' बताया।

'हफपोस्ट इंडिया' के साथ बातचीत के दौरान जयसिंह ने कहा था कि इस फैसले में लिंग असमानता को हल करने में असमर्थ रहने के साथ-साथ, तीन तलाक से पीड़ित महिलाओं को होने वाली परेशानियों पर शायद ही कभी ध्यान दिया गया है। इसके अलावा, उन्होंने आगे कहा कि इस फैसले से वास्तविक अर्थों में मुस्लिम महिलाओं का उत्पीड़न कम होने की संभावना नहीं के बराबर है।

जयसिंह ने भविष्य में व्यक्तिगत कानून को चुनौती देने वाले न्यायमूर्ति नरीमन के फैसले के प्रभाव के बारे में भी चर्चा की थी। उन्होंने कहा कि यह मामला केरल के शबरीमाला मंदिर में हिंदू महिलाओं के प्रवेश की इजाजत और शायद बाबरी मस्जिद-राम मंदिर विवाद जैसे अन्याय धार्मिक मामलों में भी मार्गदर्शक बनेगा।

बेबाक कलेक्टिव का प्रतिनिधित्व करते हुए, जयसिंह ने इस पर भी बात की कि सरकार ने सर्वोच्च न्यायालय में तीन तलाक के विरुद्ध रुझान अपनाया था, तब उन्होंने एक वकील के रूप में तीन तलाक के राजनीतिकरण के प्रति क्या दृष्टिकोण अपनाया था।

मेरी राय में, धर्म महिलाओं के अधिकारों की अंतिम सीमा है। फैसले में लैंगिक अन्याय का उल्लेख क्यों नहीं हुआ? यह कैसे हुआ?

यह कैसे हुआ? मैं निराश हूँ। मुझे निराशा इसलिए है कि सुप्रीम कोर्ट यह स्वीकार करने में विफल रहा है कि वे महिलाओं के जीवन के बारे में बात कर रही थी। यह लैंगिक विषय था, लेकिन लैंगिक अन्याय का कोई भी उल्लेख नहीं था। तीन तलाक महिलाओं के जीवन पर कितना भयावह प्रभाव डालती है उस बारे में एक शब्द भी नहीं कहा गया। हां, अपवाद रूप में, न्यायमूर्ति नरीमन ने कहा कि यह 'स्पष्ट रूप से मनमाना' है। लेकिन इस मनमानेपन का कोई स्पष्टीकरण नहीं है। इससे किस तरह एक महिला का जीवन बर्बाद हो जाता है, इस तरह की प्रथा भेदभावपूर्ण है, एक मुसलमान पुरुष को ही तीन तलाक देने का अधिकार क्यों है, तलाक पाने वाली महिलाओं के जीवन का क्या? इस फैसले में मानवीय पहलुओं की कमी है। यह याद रखना चाहिए कि लैंगिक न्याय भी मानवता के संदर्भ में ही है। बेशक, यह कानून के बारे में है, लेकिन आप किसके बारे में बात कर रहे हैं? यह उसके जीवन को कैसे प्रभावित करेगा और उसे लैंगिक न्याय पाना क्यों आवश्यक है?

हां, आप जानते हैं कि शायरा बानो द्वारा याचिका दायर की गई थी। लेकिन, शायरा बानो ने ही अत्याचार सहन किया था, इसके कारण ही वह अदालत में जाने के लिए प्रेरित हुई थी। वे नारसु अप्पा माली मामले के कारण ही अदालत में नहीं गयी थी (बंबई स्टेट बनाम नारसु अप्पा माली मामले में, मुंबई उच्च न्यायालय ने 1952 के निजी कानून को संवैधानिक चुनौती से बाहर होने का निर्णय लिया था)। ये सभी वकीलों के तर्क हैं। वकीलों के तर्क प्रतिबिंबित होते हैं, धर्मशास्त्रियों के तर्क परिलक्षित होते हैं, लेकिन तीन तलाक की शिकार महिलाएं कहीं भी दिखाई नहीं पड़ती?

इस फैसले में मानवीय पहलुओं की कमी है। तो, इस फैसले का निष्कर्ष क्या है?

सबसे महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि पिछले 25 वर्षों से यह क्षेत्र कार्यरत है। यह हल रातोंरात नहीं आया है, या सरकार की इच्छा के कारण यह पूरा हुआ है, ऐसा भी नहीं है। यह मुस्लिम महिलाओं की नई पीढ़ी के कारण संभव हुआ है।

1984 में, शहनाज शेख नाम की मुस्लिम महिला ने सर्वोच्च न्यायालय में ऐसी ही याचिका दायर की थी। आखिरकार, एक मौके पर, उसने अदालत के चक्कर काटने में समय खर्च करने के बजाय जीवन में आगे बढ़ने का फैसला किया। अगला मामला शाह बानो का था। शाह बानो भी वास्तविक अर्थ में अकेली थी। न्यायालय में सक्रियता पायी जाती है, लेकिन यह सक्रियता मुस्लिम महिलाओं में नहीं देखी जाती है।

पहली बार, भारतीय मुस्लिम महिला आंदोलन, बेबाक कलेक्टिव और अलग-अलग मुस्लिम भी स्पष्ट रूप से प्रस्तुति करते देखे गए हैं। अब, उनकी उम्मीदें और लक्ष्य पूरे होते हैं या नहीं यह एक अलग सवाल है। लेकिन, मैं इतना जरूर कहूंगी कि उनका आत्मविश्वास बढ़ा है। उनमें यह भावना देखी जा रही है कि - 'हम यह काम करने में सक्षम हैं। और इस भावना का परिणाम भविष्य में निश्चित रूप से मिलेगा।'

पिछले 25 वर्षों से, इस क्षेत्र में काम कर रही महिलाएं अपनी शक्ति का इस्तेमाल करने के लिए मुक्त हुई हैं। यह निर्णय उनकी उम्मीदों और लक्ष्यों को कैसे पूरा नहीं करता है?

क्योंकि यह हवा में लटका हुआ फैसला है। यह केवल ऐसी घोषणा है कि तीन तलाक असंवैधानिक है। इसका मतलब यह नहीं है कि मुस्लिम पुरुष तीन तलाक देना बंद कर देंगे। सभी लोग कानून के अनुसार व्यवहार करेंगे, ऐसा नहीं है। ऐसी घटनाएं होंगी और तब इन महिलाओं का अनुभव होगा, 'फैसला तो आया, लेकिन इससे क्या फर्क पड़ा? मुझे अभी भी घर से निकाल दिया जाता है, तो भी मैं क्या कर सकती हूं? क्या मुझे हर बार अदालत में जाना पड़ेगा?' इस प्रकार, निराशा की भावना पैदा होगी।

अब क्या?

यह एक दिलचस्प सवाल है। अटॉर्नी जनरल ने अदालत में यह बयान दिया था कि आप तलाक को असंवैधानिक घोषित करिए, हम कानून पारित करेंगे। लेकिन मैंने पढ़ा कि सरकार ने कहा कि कानून पारित करने का उनका कोई इरादा नहीं है। यह एक डरावनी तस्वीर है।

मुस्लिम महिलाओं को क्रूरता और परित्याग के कारणों के आधार पर तलाक दिलाने वाला महिला तलाक अधिकार अधिनियम, 1939 मौजूद ही है। अब बड़ा सवाल यह है कि यह कानून मुस्लिम पुरुषों पर समान रूप से क्यों लागू नहीं होता? जब मुस्लिम महिलाओं को अपने पति से तलाक लेना हो, तो उन्हें इस कानून के तहत अदालत में जाना होता है। लेकिन अगर कोई मुसलमान पुरुष तलाक लेना चाहता हो, तो वह तलाक के अन्य दो रूपों में से किसी का भी उच्चारण कर सकता है, जिसे असंवैधानिक घोषित नहीं किया गया है।

यह निर्णय तलाक के तीन रूपों में से एक को असंवैधानिक ठहराता है - जब तीन बार तलाक बोलकर तलाक दिया जाता है। लेकिन, कोई व्यक्ति एक साथ नहीं, परंतु अलग-अलग समय बोलकर, अपनी पत्नी को तलाक दे सकता है। तो मेरा प्रश्न यह है कि यदि मुस्लिम पति के पास जब चाहे तलाक बोलकर तलाक लेने का अधिकार है, तो यदि महिला तलाक चाहती हो तो फिर उसे अदालत में क्यों जाना चाहिए? इसके लिए कानून होना जरूरी है। मैं यह जानना चाहती हूं कि सरकार ऐसा क्यों कह रही है कि इसके लिए कानून होना जरूरी नहीं है।

मुस्लिम पतियों को अपनी पत्नियों से एकतरफा तलाक लेने का अधिकार क्यों है?

लेकिन ऐसा होने से पहले, क्या एक साथ तीन बार तलाक बोलकर तलाक देने वाले पति को सजा देने वाला कानून नहीं होना चाहिए?

विभिन्न प्रकार के कानून हो सकते हैं। लेकिन, मुझे नहीं लगता कि महिलाएं सजा के प्रावधान से संतुष्ट होंगी। इसलिए, महिलाओं की इच्छा के अनुसार कानून लाना चाहिए। उन्हें ऐसे कानून की आवश्यकता है जो एक तलाकशुदा महिला को मिलने वाला भरण-पोषण, बच्चे की अभिरक्षा, उसकी अपनी चीजों आदि को आसानी से दिलवा सके। लेकिन, मुख्य बिंदु यह है कि अगर मुस्लिम पति को तलाक लेने के लिए अदालत के दरवाजे पर दस्तक देने को मजबूर किया जाए, तो उसकी पत्नी को अधिक निष्पक्ष निर्णय मिल सकता है।

अब, अगर पुरुष तीन बार तलाक बोलकर अपनी पत्नी को तलाक दे दे, तो क्या होगा? इसका नतीजा क्या होगा?

कुछ भी नहीं होगा। परिणाम यह होगा कि महिला कह सकती है कि मैं अभी भी विवाहित हूं। इसके साथ ही, उसे यह साबित करने के लिए अदालत में नहीं जाना होगा कि वह अब शादीशुदा नहीं है। लेकिन यह मामला विवाद का रूप ले सकता है। पति कह सकता है कि यह तीन तलाक नहीं था, लेकिन तलाक अहसान था: यानी, मैंने तीन महीने की अवधि के दौरान तलाक दिया था। यदि ऐसा होता है, तो महिलाओं की स्थिति फिर पहले जैसी हो जाएगी। या, उसे यह साबित करने के लिए अदालत में जाना पड़ेगा कि वह तीन तलाक था, ना कि तलाक अहसान। या, धारा 125 के अनुसार, उसे विवाहित महिला बताकर मुआवजे की मांग करनी होगी। इस प्रकार, उसे अदालत की कार्यवाही में लगातार उपस्थित रहना पड़ेगा। इससे, यह विकल्प विशेष रूप से सहायक नहीं है।

अब, आप कहेंगे कि ऐसा तो हिंदू महिला के साथ भी हो सकता है। हाँ, हो सकता है। लेकिन, हिंदू महिला के मामले में, पति को यह साबित करना होगा कि उसने अपनी पत्नी को अदालत में तलाक दिया है। यह एक मंच बन जाता है, जिसमें आप अपने अधिकारों की मांग करते हैं। ऐसे कई हिंदू पुरुष हैं, जिन्होंने अपनी पत्नी को छोड़ दिया है और छोड़ कर चले गए हैं। लेकिन, ऐसी परिस्थितियों में भी, उसकी पत्नी को विवाहित महिला का दर्जा हासिल रहता है और इसलिए वे आसानी से वैवाहिक निवास और जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक मुआवजे का दावा कर सकती हैं।

यह एक सामान्य समस्या है। यह केवल मुस्लिम महिलाओं तक सीमित नहीं है, लेकिन मुस्लिम महिलाओं की स्थिति अधिक कठिन है। व्यक्तिगत कानून को चुनौती देने में न्यायमूर्ति नरीमन का निर्णय कितना उपयोगी है?

तथ्य आंखों के सामने है। मैं 101 विभिन्न व्यक्तिगत कानून बता सकती हूं, जो भेदभावपूर्ण हैं और जिन्हें चुनौती दी जा सकती है। हम दावा पेश करने या लिंग आधारित भेदभाव का दावा शामिल करने के लिए न्यायमूर्ति नरीमन के फैसले पर भरोसा कर सकते हैं। उन्होंने पारिवारिक मुद्दों के लिए कानूनों का मार्ग प्रशस्त किया है, इसके साथ ही मौलिक अधिकारों के अनुसार, उनके विश्लेषण के दायरे को बढ़ाया है। लेकिन, कठोर वास्तविकता यह है कि अदालत में व्यक्तिगत कानून में किसी भी परिवर्तन की अनुमति देने पर उदासीनता अभी भी प्रचलित है। मेरा मानना है कि जब महिलाओं के अधिकारों का सवाल आता है, तो धर्म आखरी सीमा हो जाता है। काम करने का अधिकार, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न, कॉलेजों में प्रवेश पाने की

समानताएं और आरक्षण आदि में महिलाओं के अधिकारों को महत्व दिया है, लेकिन उन्हें परिवार के संवैधानिक कानून में प्रवेश करने की अनुमति नहीं है। ऐसा लगता है कि किसी पुरुष का घर उसके स्वामित्व वाला महल है, जिसमें कोई और प्रवेश नहीं कर सकता है। महिलाओं का यह आंदोलन दुनिया भर में चलाया जा रहा है। मेरी राय में, पारिवारिक कानून एक द्वीप जैसा है, जिसे संविधान छू नहीं सकता।

सुनवाई के पहले दिन, आपने न्यायाधीशों को बताया था कि नारसु अप्पा माली के मामले के भ्रम को दूर करना आवश्यक है। क्या न्यायमूर्ति नरीमन के फैसले के बाद यह भ्रम दूर हुआ है?
मुझे नहीं लगता कि यह भ्रम दूर हुआ है। मेरा मानना है कि यह भ्रम पहले मामूली सा दिखाई देता था, लेकिन अब इसे स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

न्यायमूर्ति नरीमन के आदेश में, सर्वोच्च न्यायालय ने पहली बार कहा है कि व्यक्तिगत कानून को चुनौती दी जा सकती है। क्या यह बड़ी बात नहीं है?
यह वास्तव में एक बड़ी बात है। न्यायमूर्ति नरीमन ने नई जगह बनाई है। अब, इसका अधिकतम उपयोग करने की जिम्मेदारी वकीलों की भावी पीढ़ियों की है।

इस मामले पर सुनवाई करने के लिए विभिन्न धर्मों के पांच अलग-अलग न्यायाधीशों को रखने का क्या कारण है?
लोगों के मुताबिक, यह अंतरधर्मी अदालत है। लेकिन, एक न्यायाधीश के रूप में, आपको अपने विश्वास से अलग होकर सिर्फ संविधान के अनुसार सब कुछ परीक्षण करना होता है। इस फैसले के द्वारा आस्था के मर्म को पेश करने का प्रयास किया गया है। धर्म क्या है और इस्लाम के उपदेश क्या हैं उनको बताया गया है। पांच न्यायाधीशों में से कोई भी इस्लाम का विशेषज्ञ नहीं है, मौलवी नहीं, इस्लामी न्यायविद् नहीं और फिर भी, वे हमें इस्लाम का अर्थ बताते हैं। यह स्वीकार करना मुश्किल है।

इसलिए, आपकी राय में, जोश में आने की कोई जरूरत नहीं है?
हां। जो धर्म से संबंधित नहीं हो वह जानना आवश्यक है, और फिर निर्णय लेना चाहिए। अंततः भारतीय दंड संहिता सभी भारतीय नागरिकों पर लागू होती ही है। इसलिए, आप यह नहीं कह सकते कि मुस्लिम पर्सनल लॉ में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

तीन तलाक के मामले का एक राजनीतिक रंग भी था। ऐसी परिस्थितियों में, आप इसे वकील के तौर पर कैसे देखते हैं?
यह व्यापक राजनीति वाला मामला था। पहला निर्णय यह लेना था कि अदालत में प्रवेश करना है या नहीं। हम सभी जानते हैं कि यह मुद्दा भाजपा सरकार द्वारा उठाया गया था। साथ ही, हम यह भी जानते हैं कि वास्तव में, बीजेपी सरकार को अल्पसंख्यकों के प्रति कोई सहानुभूति नहीं है।

यह हकीकत इस तथ्य से स्पष्ट है कि उत्तर प्रदेश में अल्पसंख्यकों का कोई प्रतिनिधित्व नहीं है, साथ ही साथ मनमानी हिंसा और कई अन्य कारक इस तथ्य को साबित करते हैं। इसलिए, एक दृष्टिकोण यह था कि अदालत का बहिष्कार किया जाए और इसे एक राजनीतिक मुद्दा बताकर जो होना हो उसे होने दिया जाए। लेकिन उसके बाद, गहन मंथन करने पर यह स्पष्ट है कि अदालत एक लोकतांत्रिक क्षेत्र है। तो, सवाल यह है कि एक धर्मनिरपेक्ष व्यक्ति के रूप में, क्या हमें मैदान छोड़ दने चाहिए या अदालत में पेश होकर हमारे विचारों को प्रस्तुत करना चाहिए? इसके अलावा, हम यह दिखाना चाहते थे कि मुस्लिम महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। उन्होंने इस आंदोलन की शुरुआत की है और पूरे घटनाक्रम के दौरान उनकी भूमिका महत्वपूर्ण रही है।इस क्षेत्र में प्रवेश करने का तीसरा कारण यह था कि जो कुछ भी निर्णय आता है, वह महिलाओं को शबरीमाला मंदिर में प्रवेश करने की इजाजत जैसे मुद्दों को प्रभावित करेगा। इसलिए, यह मामला न केवल मुस्लिम महिलाओं के लिए महत्वपूर्ण था, बल्कि सभी महिलाओं के लिए भी महत्वपूर्ण बना गया। हिन्दू महिलाओं को भी भेदभाव का सामना करना पड़ता है। आखिरकार, इस कारण से मुझे इस मामले में इतना समय देना पड़ा।इसके अलावा, हम यह दिखाना चाहते थे कि मुस्लिम महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। उन्होंने इस आंदोलन की शुरुआत की है और पूरे घटनाक्रम के दौरान उनकी भूमिका महत्वपूर्ण रही है।

इस फैसले के कारण, निजी कानून को चुनौती देने का मार्ग प्रशस्त हुआ है, जिससे आप इस फैसले को 'महत्वपूर्ण' मानती हैं लेकिन साथ ही आप निराश भी लगती हैं?
मेरे दोस्तों और सहकर्मियों के साथ चर्चा करने के बाद, इस मुद्दे को

हाथ में लेने में मुझे एक साल लगा था। और यही कारण है कि यह फैसला ऐसे गंभीर मुद्दे पर विचार करने के लिए समय का अभाव दर्शाता है। एक मुख्य न्यायाधीश हैं, जो रिटायर होने वाले हैं और वह मई में सुनवाई तय करते हैं। जैसा कि मैंने आपको बताया, मुझे खुद को तैयारी करने में एक साल लग गया और मुझे पूरा विश्वास है कि अन्य लोगों को भी पूरे मामले पर विचार करने और तर्कों को तैयार करने में बहुत समय लगा होगा। इसलिए, मई में सुनवाई और अगस्त तक निर्णय देकर, मुझे लगता है कि यह थोड़ा जल्दबाजी वाला कदम है। आप उसकी प्रतिक्रियाओं को देख सकते हैं।

मुख्य न्यायाधीश का अस्सी प्रतिशत निर्णय इस पर आधारित होता है कि कौन व्यक्ति क्या कह रहा है। ऐसा हुआ, वैसा हुआ, आदि। एक पंक्ति अन्य पंक्ति के साथ फिट नहीं बैठती। एक पैराग्राफ दूसरे पैराग्राफ के साथ ठीक से नहीं जुड़ता है। इसलिए, यह धारणा पैदा होती है कि यह काम किसी भी कीमत पर 25 अगस्त से पहले पूरा किया जाना था।

न्यायमूर्ति कुरियन का फैसला भी कुछ इसी तरह का है। उनका निर्णय बहुत छोटा है। निस्संदेह, उन्होंने कहा कि आस्था की स्थिति में जो बुरा है, वह कानून के मामले में भी बुरा है। लेकिन ऐसा क्यों होता है उन्होंने इसकी व्याख्या नहीं की। क्या कानून की दृष्टि में जो बुरा है, आस्था की दृष्टि में भी बुरा है? जवाब इनकार में भी हो सकता है। कानून के संदर्भ में बुरा हो वह आस्था की दृष्टि में बेहतर भी हो सकता है। इसलिए, इस तर्क को हल करना आवश्यक है।

यह फैसला इस तरह के गंभीर मुद्दे पर विचार करने के लिए समय की कमी को स्पष्ट रूप से दर्शाता है।

सुप्रीम कोर्ट ने तीन तलाक को असंवैधानिक बताया है। तो, पूरी स्थिति के नजरिए से क्या यह निराशाजनक या उत्साहजनक है?

हालांकि कदम छोटा है, लेकिन मुझे इस बात की खुशी है कि हमने सही दिशा में कदम रखा है। मेरी राय में, इस लड़ाई को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी नारीवादी वकीलों की भावी पीढ़ियों की है। ■

समुदाय छुए बिना सीवेज सिस्टम (मलजल तंत्र) का प्रबंधन कैसे कर सकता है?

जे-पाल (J-PAL) के साथ जुड़े शोधकर्ताओं ने खुले में शौच की समस्या को हल करने के लिए महत्वपूर्ण मुद्दों का मूल्यांकन किया है। इस बारे में यह लेख http://www.icontact-archive.com/ पर प्रकाशित किया गया था। इसका हिन्दी अनुवाद यहां दिया गया है।

ऐसा अनुमान है कि पूरे देश में स्वच्छ भारत अभियान के तहत खुले में शौच जाना 2019 तक बंद हो जाएगा। ग्रामीण क्षेत्रों में 4.7 करोड़ नए शौचालयों के निर्माण के बाद, दृष्टिकोण में बदलाव और परिणामों को जांचने की प्रक्रिया शुरू की जा रही है, तब इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए लोगों की मानसिकता में सुधार करने के लिए जो करना चाहिए उस पर गहन अध्ययन किया जा रहा है।

जे-पाल (J-PAL) के साथ जुड़े शोधकर्ताओं ने खुले में शौच की समस्या को हल करने के लिए महत्वपूर्ण मुद्दों का मूल्यांकन किया है। इन निष्कर्षों से यह सवाल पैदा होता है कि क्या खुले में शौच जाने वाले लोग मौजूदा शौचालय तकनीक के साथ सामंजस्य बिठा पाएंगे। या फिर भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्वच्छता उपायों को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए और अधिक नवीन पहल और मूल्यांकन की आवश्यकता है? इस तथ्य के बावजूद कि लाखों शौचालय बनाए गए हैं, शौचालय विहीन लोगों के द्वारा उनका उपयोग नहीं किया जाता है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-IV द्वारा 6,00,000 परिवारों का सर्वेक्षण किया गया, जिसके अनुसार 51.6 प्रतिशत शहरी और ग्रामीण परिवारों को शौचालय सुविधा का उपयोग नहीं करते। कोफी और स्पियर्स की हाल ही की पुस्तक 'व्हेयर इंडिया गोज़' ने तर्क दिया है कि ग्रामीण इलाकों में शौचालयों के इस्तेमाल नहीं करने का सबसे

सर्वेक्षणकर्ता भुवनेश्वर में शौच जाने के बारे में सवाल पूछ रहे हैं (फोटोः गौतम पटेल, सीनियर पॉलिसी मैनेजर, जे-पाल दक्षिण एशिया)

बड़ा कारण यह है कि लोग चिंतित हैं कि गड्ढा भर जाएगा, तो निपटान प्रणाली का ध्यान कौन रखेगा? जुड़वां-गड्ढे (ट्विन-पिट) समाधान के हिमातियों का कहना है कि गड्ढे को भर जाने पर उसे एक वर्ष तक रखा जाता है, फिर उपयोगकर्ता आसानी से सूखे मल को निकाल सकते हैं और इसे खाद के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं। हालांकि, वर्ष की शुरुआत में कुछ वरिष्ठ आईएएस अधिकारियों द्वारा किए अनुसार, अगर कोई गड्ढे में प्रवेश करने के लिए तैयार नहीं हो, तो यह काम किसी और को पैसे देकर करवाया जा सकता है। इसके अलावा, यह भी एक विचार है कि जुड़वां-गड्ढा शौचालय जल्दी से भर जाता है, जिससे अमीर लोग बड़े मल टैंक के लिए बहुत पैसा खर्च करते हैं, लेकिन यह विकल्प गरीब लोग वहन नहीं कर सकते।

गरीब वर्गों को प्रोत्साहित या प्रेरित करना पर्याप्त नहीं है, शौचालय सस्ते होने चाहिए

घनी आबादी वाले भारत के पड़ोसी देश के अचानक मूल्यांकन के आधार पर, यह पाया गया कि जिस क्षेत्र में एक स्वैच्छिक संगठन ने शौचालयों को प्रोत्साहन और सब्सिडी प्रदान की थी, उस क्षेत्र के परिवारों में शौचालयों के लिए सकारात्मक प्रतिक्रिया देखी गई थी। स्वच्छ भारत अभियान समुदाय को प्रोत्साहित करने के लिए इस मॉडल - समुदाय के नेतृत्व में संपूर्ण स्वच्छता (सीएलटीएस) का उपयोग कर रहा है। सीएलटीएस खुले में शौच के नकारात्मक पहलुओं की तरफ लोगों का ध्यान खींचता है, स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों को बताता है और स्वच्छता को गति देता है। इस अध्ययन के आधार पर, यह पाया गया कि अगर समुदाय को अपने खर्चे से शौचालयों का निर्माण करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए, तो इससे शौचालयों के उपयोग या खुले में शौच जाने में कोई महत्वपूर्ण बदलाव नहीं देखा गया था। लेकिन जब सीएलटीएस के साथ सब्सिडी का सुविधा (शौचालय की कुल लागत की 75 प्रतिशत सब्सिडी) प्रदान की गई थी, तो इसका काफी प्रभाव देखा गया। इससे

पता चलता है कि गरीबों के लिए शौचालय सस्ते होने चाहिए, क्योंकि, व्यापक रूप से किए गए शोध के आधार पर पाया गया कि निवारक स्वास्थ्य उत्पादों के इस्तेमाल में वित्तीय सुविधा बाधा बनती है। अध्ययन के आधार पर, यह भी पाया गया कि अड़ोस-पड़ोस में वित्तीय सहायता का कम वितरण किया गया हो उसकी तुलना में अधिक वितरण किया गया हो, वहां अधिक से अधिक परिवारों ने इस आर्थिक सहायता का इस्तेमाल किया था। समुदाय में वित्तीय सहायता की सही मात्रा व्यक्ति के दृष्टिकोण में बदलाव लाने के लिए प्रभावी साधन बन सकती है।

हालांकि, ग्रामीण इंडोनेशिया में अचानक मूल्यांकन के आधार पर, यह पाया गया कि गरीब परिवारों के लिए शौचालय किफायती न होने के कारण सीएलटीएस का उन पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा था। जबकि जो गरीब नहीं थे उन परिवारों ने शौचालयों का निर्माण करवाया था, जिससे जीव-जंतुओं की परेशानी में कमी आई और उन्होंने खुले में शौच का व्यापक बहिष्कार किया। 160 गांवों में, सीएलटीएस के व्यापक कार्यान्वयन के लिए दो प्रकार के तरीकों के प्रभाव का अध्ययन किया गया था। जहां प्रशिक्षित पेशेवर संसाधन एजेंसियों ने सीएलटीएस लागू किया, वहां शौचालयों का निर्माण संतोषजनक था, लेकिन जहां स्थानीय सरकारों द्वारा शौचालय बनाए गए थे, वहां स्थिति निराशाजनक थी। इस प्रकार, भले ही कार्यान्वयन की पद्धति काफी स्पष्ट है, लेकिन सरकारी मशीनरी द्वारा किया जाने वाला काम आगे बढ़ाया जाना चाहिए, उसके सामने जो चुनौतियां हैं, उन्हें इस मूल्यांकन से ज्ञात किया जा सकता है।

शहरी समुदाय अपने शौचालयों का प्रबंधन कैसे करते हैं?

हाल ही में, दिल्ली के सफाईकर्मियों की गटरों की सफाई के दौरान मृत्यु हो गई थी, और इसके साथ ही देश भर में इसी तरह 1300 लोगों के मारे जाने की चौंकाने वाली खबर सामने आई थी। ग्रामीण भारत में, लगभग 1,68,066 परिवारों ने खुद को सामाजिक-आर्थिक जाति (आधारित), 2011 की जनगणना में स्वयं की पहचान सफाईकर्मी के रूप में की थी। मल-मूत्र के छूने पर रोक लगाने के हाल के कानूनों, और सीवेज उपचार के लिए मशीनों और उपकरणों की उपलब्धता के बावजूद यह स्थिति है। इसमें भी, शहरों में अपूर्ण व्यवस्था के कारण, मलजल निपटान की स्थिति बहुत खराब है। 2015 के एनएसएसओ सर्वेक्षण के अनुसार, 60 प्रतिशत से अधिक वार्ड समुदाय और सार्वजनिक शौचालयों के पास तरल कचरा निपटान की उचित व्यवस्था नहीं है। 'स्वच्छ भारत शहरी डैशबोर्ड' के अनुसार, 1.8 लाख नए समुदाय और सार्वजनिक शौचालयों का निर्माण किया गया है। सरकार ने 2015 में शहरी ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के लिए 25 प्रतिशत धनराशि आवंटित की, 2016 में यह प्रतिशत बढ़ाकर 51 प्रतिशत किया गया था।

उड़ीसा में अनिश्चित मूल्यांकन के तहत, यह अध्ययन किया जाता है कि शहरी समुदायों में स्वच्छता संबंधित सुविधाओं का प्रबंधन कैसे किया जाता है। प्रारंभिक सर्वेक्षण के दौरान, यह पाया गया कि भुवनेश्वर और कटक की मलिन बस्तियों में लगभग 45 प्रतिशत परिवारों द्वारा सार्वजनिक या सामुदायिक शौचालयों का उपयोग किया जाता है। हालांकि, आधे से अधिक शौचालय गंदे या बहुत गंदे थे। लगभग एक तिहाई परिवार खुले में शौच जाते थे। मूल्यांकन करने के लिए, नगर निगम ने हवा-रोशनी और प्रकाश व्यवस्था वाले नए शौचालय बनाए हैं। इसके साथ ही, कपड़े धोने और स्नान की सुविधा भी बनाई गई है। हर शौचालय के लिए सामुदायिक प्रबंधन समिति नियुक्त की गयी थी, जिसकी जिम्मेदारी थी कि शौचालय की सुविधा ठीक से काम करती रहे। शौचालयों की देखभाल करने के लिए एक व्यक्ति और सफाईकर्मी भी रखा गया था। इन सुविधाओं का उपयोग करने वालों से शुल्क लिया जाता है और यह राशि समिति के बैंक खाते में जमा की जाती है। शौचालय प्रबंधन का खर्च इस राशि से किया जाता है। इस अध्ययन में लोगों की मानसिकता में परिवर्तन लाने के लिए सीएलटीएस के दृष्टिकोण का उपयोग किया गया था। इसके साथ ही, समुदायों द्वारा सफलतापूर्वक स्वच्छ शौचालयों का प्रबंधन किया जाए इसके लिए टिकाऊ मॉडल निर्धारित करने के लिए विभिन्न सब्सिडी का उपयोग भी किया गया था।

अचानक (अनिश्चित) मूल्यांकनों का यह सेट समुदाय प्रोत्साहन के उपायों (कामकाज) के महत्व को इंगित करता है। यह भी सुझाव देता है कि शौचालय उपलब्ध होने और स्वास्थ्य के सकारात्मक प्रभाव उपलब्ध होने के लिए यह सुनिश्चित करना चाहिए कि स्वच्छता सुविधाएं गरीबों के लिए उपलब्ध हों। भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्वच्छता सुविधाओं के अध्ययन के माध्यम से, स्वच्छ भारत अभियान के तहत स्वच्छ और सुविधायुक्त शौचालयों में बाधा बनने वाले खर्च और मानसिकता को सकारात्मकता में बदल करके इस तरह के परिवारों तक पहुंच का प्रभावी ढंग से विस्तार करना संभव है। ■

जल योद्धाः

बुंदेलखंड में 'जल सहेली' बनी महिला सशक्तिकरण का उत्कृष्ट उदाहरण

'यूरोपीय संघ' और एक स्थानीय संगठन 'परमार्थ समाज सेवा संस्थान' के सहयोग से 'वेलथंगरहिल्फ' सूखा ग्रस्त बुंदेलखंड क्षेत्र में काम कर रहा है। 'वेलथंगरहिल्फ' के हस्तक्षेप वाले गांवों में, साथी संगठन परमार्थ के सहयोग से, जल सेहली नामक महिलाओं का कैडर तैयार किया गया है, जो जल संसाधनों के प्रबंधन और संरक्षण में पहल करता है और उनके जल अधिकारों के लिए संघर्ष करता है। यह लेख दिनांक 27 जुन, 2017 को http://welthunger hilfeindia.org/the-water-warriors-women-lead-the-way-in-bundelkhand/ पर अंग्रेजी में प्रकाशित किया गया था, इसका हिन्दी अनुवाद यहां दिया गया है।

सीमा देवी, 'धामना' गांव की जल सहेली हैं। वे दृढ़-संकल्पी, अथक, प्रेरित और अक्सर अबाध रूप से काम करती हैं। वे अपने अधिकारों, अपने गांव के विकास और जीवन की बुनियादी आवश्यकता - पानी के लिए लड़ती हैं। वे जल योद्धा हैं। सीमा देवी, पुनिया देवी और कुंती देवी, उत्तर भारत के उत्तर प्रदेश राज्य के बुंदेलखंड क्षेत्र की महिलाएं हैं जिन्हें आम तौर पर 'जल सहेली' कहते हैं। हालांकि उनके गांव अलग-अलग हैं, लेकिन उनका आदर्श वाक्य एक हैः 'सभी के लिए पानी'। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, वे कठोर संघर्ष करती हैं। वे अपने गांव में कुओं की खुदाई करती हैं, तालाबों की गाद निकालती हैं, समुदाय के साथ मिलकर चेक बांध का निर्माण करती हैं, हैंड पंप लगाती और मरम्मत करती हैं और वर्षा जल संचयन करती हैं।

माम्ना गांव की कुंती देवी कहती हैं, 'यह हमारे अस्तित्व का मुद्दा है'। 'हमारे गांव में गंभीर जल संकट है। पीने का पानी खारा है।

जल सहेली हैंड पंप की मरम्मत कर रही हैं

हमारे गांव में ही 45 हैंड पंप हैं जिनसे खारा पानी आता है, जो पीने योग्य नहीं है'। आदर्श स्थिति यह है कि, हमें सरकार की जल आपूर्ति योजना के माध्यम से नियमित पानी मिलना चाहिए। लेकिन बिजली की कमी के कारण पानी सप्ताह में केवल दो बार उपलब्ध हो पाता है। महिलाओं को ट्यूब वैल से पानी लाने के लिए मीलों चलना पड़ता है। इसका उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। हमारी मां, दादी और परदादी को पानी लाने के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ती थी। हमने भी वही किया। लेकिन अब बस और नहीं। हम नहीं चाहते कि हमारी बेटियां भी इस स्थिति से गुजरें। हम चाहती हैं कि वे पढ़ें।

'धामना' गांव की सीमा देवी इस विचार का समर्थन करती हैं। इससे आगे बढ़ते हुए, वे सोचती हैं कि महिलाओं को एक साथ मिलकर पहल करना चाहिए। 'मुझे इसका एहसास है कि हमारी जो समस्याएं हैं, उनका हल हमें खुद ढूंढना होगा, हम हमेशा दूसरों से ऐसा करने की उम्मीद नहीं कर सकते।'

बाधाओं को पार करना

जैसी उम्मीद थी, उनके लिए शुरुआत करना आसान नहीं था। उन्हें परिवार, जाति या समुदाय के हर स्तर पर बाधाओं को दूर करना पड़ा। सीमा बताती हैं, 'शुरू में जब मैंने जल सहेली के रूप में काम करना शुरू किया, तो गांव के कई लोगों ने मेरे पति से कहा कि मुझे पुरुषों के साथ बैठक में भाग लेने में शर्म आनी चाहिए। कई बार, उन्होंने कहा कि मैं बाहर निकलकर संस्कृति को खराब कर रही हूं'। मैंने अपने पति के साथ इस काम पर चर्चा की और उन्हें हमारी कुछ बैठकों में ले गई। जब उन्होंने अपनी आंखों से

देखा कि जो काम हम कर रहे थे वह गांव के विकास के लिए था, तो उन्होंने मुझे सहयोग देना शुरू कर दिया। धीरे-धीरे समुदाय ने मेरे और मेरे काम के प्रति अपना रुख बदल दिया।' इसे सही दिशा में एक कदम कहते हुए, पुनिया देवी कहती हैं कि 'जल सहेली' बनना मेरे लिए सशक्तिकरण की प्रक्रिया रही है'। 'मेरा आत्म विश्वास बढ़ा है। अब मैं बिना झिझक के सरकारी अधिकारियों से मिल सकती हूं और हमारी चिंताओं को प्रकट कर सकती हूं और बता सकती हूं'। उन महिलाओं के लिए कुछ नया और असामान्य है, जो हमेशा घूंघट में रहती हैं और उन्हें परिवार के बाहर किसी से भी बात करने की अनुमति नहीं दी जाती, केवल एक आदमी को छोड़कर।

महिलाओं को जोड़ना

जल सहेली की अवधारणा को पहली बार इस क्षेत्र में स्थानीय संगठन, परमार्थ समाज सेवी संस्थान द्वारा यूरोपीय संघ और वेलथंगरहिल्फ के सहयोग से संचालित एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन परियोजना को 2011 के कार्यान्वयन के दौरान पेश किया गया था। इन वर्षों में जैसे-जैसे यह विकसित हुआ, ईयू द्वारा वित्तपोषित 'प्रभावकारी और पारदर्शिता के लिए जमीनी स्तर के सिविल सोसायटी कैडर परियोजना' के तहत इस पहल को और बढ़ावा मिला। इसे वेलथंगरहिल्फ द्वारा उत्तर प्रदेश सहित छह राज्यों में लागू किया जा रहा है। इस पहल के तहत जल सहेलियों ने अपने गांवों में जल पंचायत नामक अनौपचारिक समितियां गठित की हैं, जो पानी के मुद्दों पर महिलाओं को जोड़ने के लिए एक मंच है। इसका उद्देश्य, निर्णय लेने में महिलाओं की भागीदारी में विशेष रूप से, इस क्षेत्र में जल और आजीविका संबंधी मुद्दों पर वृद्धि करना है।

जल सहेली पुनिया देवी अपने साथी निवासियों के साथ बैठक करते हुए

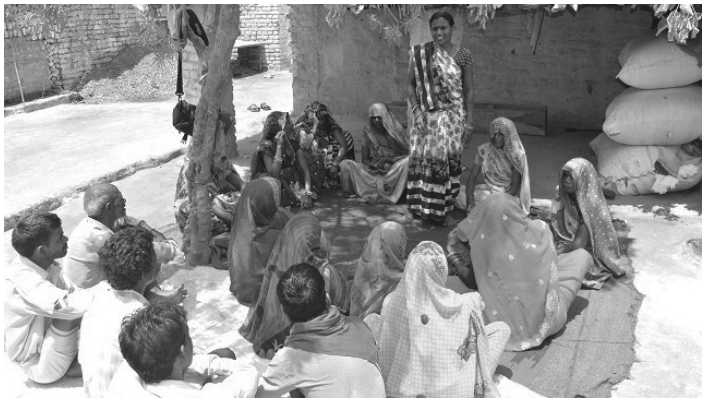

चाहे जल प्रबंधन हो, संरक्षण, पुराने जलाशयों का पुनरुद्धार, जल संसाधनों का विकास हो या स्वच्छता, सफाई, रोजगार और गांव के समग्र विकास जैसे मुद्दे हों, पानी पंचायत ग्रामीण मुद्दों पर चर्चा करने के लिए एक मंच के रूप में कार्य करती है। पुनिया देवी कहती हैं, 'यह एक ऐसी जगह है जहां हम समस्याओं की चर्चा करते हैं और रणनीतियों पर विचार-विमर्श करते हैं, ताकि उन्हें सामूहिक रूप से हल कर सकें।'

निर्णायक भूमिका

आज, बुंदेलखंड क्षेत्र में वेलथंगरहिल्फ़ और यूरोपीय संघ द्वारा समर्थित 130 सूखा-ग्रस्त गांवों में 260 जल सहेलियां काम कर रही हैं। उनमें से ज्यादातर दलित (पहले जिन्हें अछूत कहते थे) और आदिवासी समुदायों से हैं, जिनका ऊंची जाति के द्वारा दमन और भेदभाव किया जाता रहा है। उनका मुख्य काम पानी, आजीविका और विकास संबंधी मुद्दों पर ग्रामीण स्तर की बैठकों में भाग लेकर शासन प्रक्रिया में भाग लेना है। वे गांव के लिए प्राथमिकताओं को निर्धारित करने में सहायता करती हैं और जल संसाधनों के प्रबंधन में एक निर्णायक भूमिका निभाती हैं। इसमें पानी का बराबर वितरण, नए जलाशयों के निर्माण की आवश्यकता का आकलन और निष्क्रिय जलाशयों का सरकारी ग्रामीण रोजगार योजना (एमजीनरेगा) की सहायता से पुनरुद्धार करना शामिल है।

इस कार्य को प्रभावी ढंग से पूरा करने के लिए उन्हें परमार्थ संस्था का सहयोग मिलता रहता है। यह उन्हें पानी के अधिकार और जल साक्षरता जैसे बड़े विषयों पर प्रशिक्षण प्रदान करने से लेकर, सरकार की चालू रोजगार योजनाओं और पंचायती राज संस्थानों

जल सहेली अब स्थानीय अधिकारियों के साथ आसानी से बातचीत कर सकती हैं

(पीआरआई) के मानदंडों और मार्गनिर्देशों के बारे में बताने से लेकर, सामाजिक ऑडिट करने, जल सुरक्षा योजना तैयार करने, आईटी तकनीकों का उपयोग, जल संसाधनों का प्रबंधन, पानी की गुणवत्ता की निगरानी और जाँच करने के साथ ही हाथ पंपों की मरम्मत करने के लिए अधिक कौशल उन्मुख सत्रों का आयोजन करके उनकी क्षमता निर्माण करता है।

प्रभाव

परिणाम दिखाई देने लगे हैं। जल सहेलियों के सीधे प्रयासों के माध्यम से, 56 नए जलाशयों को निर्मित और पुनर्जीवित किया गया है जिसमें चेक बांध और तालाब शामिल हैं। इससे भूजल स्तर को बढ़ाने में मदद मिली है। विभिन्न हितधारकों के साथ मिलकर 112 जलाशयों का निर्माण किया गया है। गांव के स्तर पर जलाशयों के रखरखाव और प्रबंधन के लिए एक विशेष निधि बनाई गई है। जल सहेलियां जल साक्षरता की प्रभावी संदेशवाहक रही हैं। इन्होंने पानी का कुशलता से उपयोग करने, वर्षा जल संचयन और टिकाऊ कृषि प्रथाओं का इस्तेमाल करने और रसोई बागवानी के बारे में जागरूकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वे पंचायत, ब्लॉक, जिला और राज्य स्तर पर उन लोगों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई भी करती हैं जो जीवन का अधिकार, सम्मान का अधिकार, काम करने का अधिकार और समानता का अधिकार जैसे अधिकारों का उल्लंघन करते हैं।

सीमा (मध्य में) जैसी जल सहेलियां पानी की समान प्राप्ति के लिए काम कर रही हैं

कोई आश्चर्य नहीं कि उनके प्रयासों ने मीडिया का व्यापक रूप से ध्यान आकर्षित किया है। जिला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर भी उनके प्रयासों की सराहना की गई है। लेकिन उनका मिशन खत्म नहीं हुआ है। वे बड़ा सपना देख रही हैं। जल अधिकारों के लिए एक मजबूत अधिवक्ता होने के नाते, वे राष्ट्रीय स्तर के कार्यकर्ताओं के साथ देश में जल सुरक्षा अधिनियम और नदी कायाकल्प नीति लागू करने के लिए काम कर रही हैं। वे आशा करती हैं कि इस कदम से सभी समुदायों को समान रूप से पानी प्राप्त हो सकेगा।

'मैं अपने गांवों को समृद्ध देखना चाहती हूं। मैं हर घर में पीने का पानी देखना चाहती हूं। मैं इसी के लिए काम कर रही हूं। और यह केवल शुरुआत है,' सीमा देवी जोर देकर कहती हैं। आशावादी मुस्कान उनके चेहरे को खिला देती है। ■

उन्नति

उन्नति

विकास शिक्षण संगठन

जी-1, 200, आज़ाद सोसायटी, अहमदाबाद-380015

फोनः 079-26746145, 26733296 फैक्सः 079-26743752 email: sie@unnati.org वेबसाइटः www.unnati.org

राजस्थान क्षेत्रीय कार्यालय

650, राधाकृष्णन पुरम, लहरिया रिसोर्ट के पास, चौपासनी-पाल बाई पास लिंक रोड, जोधपुर-342014, राजस्थान

फोनः 0291-3204618 email: jodhpur_unnati@unnati.org

इस बुलेटिन के लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं।

दीपा सोनपाल, रमेश पटेल : ईमेलः sie@unnati.org, publication@unnati.org

अनुवादः आर. के. गुप्ता

मुद्रकः प्रिन्टविझन, अहमदाबाद

केवल सीमित वितरण के लिए

आप लोक शिक्षण व प्रशिक्षण के लिए विचार में प्रकाशित सामग्री का सहर्ष उपयोग कर सकते हैं। कृपया सौजन्य का उल्लेख करना न भूलें और साथ ही अपने उपयोग से हमें अवगत करवायें ताकि हम भी उससे कुछ सीख सकें।